॥ श्रीः ॥

सत्याग्रहगीता

प्रथमोऽध्यायः

गम्भीरो विषयः कार्यं श्रेष्ठः सत्याग्रहात्मकः ।
कृत्स्ने जगति विख्यातः क मे लघुतमा मतिः ॥ १ ॥

(१) समस्त संसारमें विख्यात सत्याग्रहात्मक यह श्रेष्ठ और गम्भीर विषय कहाँ ! और मेरी बहुत तुच्छ बुद्धि कहाँ !

शब्दगौरवहीनाहं युद्धस्यैतस्य गौरवम् ।
व्याख्यातुमसमर्थास्मि गुणैर्दिव्यैर्विभूषितम् ॥ २ ॥

(२) शब्दभंडारके गुरुत्वसे हीन मैं दिव्य गुणोंसे विभूषित इस युद्धके गौरवका वर्णन करनेमें अशक्त हूं ।

तथापि देशभक्त्याहं जातास्मि विवशीकृता ।
अत एवास्मि तद्गातुमुद्यता मन्दधीरपि ॥ ३ ॥

(३) तो भी अपने देशके प्रेमसे विवश होकर मन्दबुद्धिवाली होकर भी उसे गानेको उद्यत हो गई हूँ ।

दुहिता शङ्करस्याहं पण्डितस्य क्षमाभिधा ।
अक्षमापि कवेर्मार्गे श्रोतव्या वस्तुगौरवात् ॥ ४ ॥

(४) मेरा नाम क्षमा है-शंकर पण्डितकी मैं लड़की हूं । कविके मार्गमें अक्षमा अर्थात् असमर्थ मैं हूँ । तोभी विषयके गौरवके कारण मेरा कहना सुनना चाहिए ।

भारतावनिरत्नाय सिद्धतुल्यमहात्मने ।
गान्धिवंशप्रदीपाय गीतिमेनां समर्पये ॥ ५ ॥

(५) भारत भूमिके जो रत्नस्वरूप हैं, गान्धी वंशके लिए जो दीपकके समान हैं, उस सिद्धतुल्य महात्माको यह गीति मैं समर्पण करती हूँ।

बहुवर्षाणि देशार्थे दीनपक्षावलम्बिना ।
कृषिकाणां सुमित्रेण कृतो येन महोद्यमः ॥ ६ ॥

(६) जिसने किसानोंका मित्र बनकर गरीबोंका पक्ष लेकर देशके लिये बहुत वर्षोंतक श्रम किया।

यथापूर्वगुणैर्युक्तः पूज्यतेऽखिलभारते ।
सतां बहुमतो देशे विदेशेष्वपि मानितः ॥ ७ ॥

(७) अपूर्व गुणोंसे युक्त होनेके कारण जिसकी समस्त भारतमें पूजा होती है, स्वदेशमें सत्पुरुष जिसका मान करते हैं, और विदेशोंमें भी जो आदर पाता है।

मनस्विनस्त्रयस्त्रिंशत्कोटिनृणां हितैषिणः ।
पुण्यं शुद्धात्मनः पुण्यात्सिद्धानां चातिरिच्यते ॥ ८ ॥

(८) तैंतीस करोड़ मनुष्योंके हितके अभिलाषी, शुद्ध आत्मा-वाले उस मनस्वीका पुण्य सिद्धोंके भी पुण्यसे बढ़कर है।

वीतरागो जितक्रोधः सत्याहिंसाव्रतो मुनिः ।
स्थितधीर्नित्यसत्त्वस्थो महात्मा सोऽभिधीयते ॥ ९ ॥

(९) आसक्तिविहीन, क्रोधको जीतनेवाला, सत्य और अहिंसाके व्रत-को धारण करनेवाला, स्थिरबुद्धिवाला, सदैव सत्त्वगुणमें स्थित (मनुष्य) महात्मा कहलाता है।

अपूर्वकीर्तियुक्तस्य निर्ममस्यानहङ्कृतेः ।
माहात्म्यमस्य भूपानां वैभवादतिरिच्यते ॥ १० ॥

(१०) ऐसे अपूर्व कीर्तिसे युक्त, अहंकार रहित, स्वार्थ रहित पुरुषकी महत्ता राजवैभवसे श्रेष्ठ है।

विनीततमवेषोऽसौ विलासविरतान्तरः ।
निर्धनान् महता दैन्येनातिशेते निजेच्छया ॥ ११ ॥

(११) अतिविनीत वेषवाला, विलाससे विरक्त मनवाला और अपनी इच्छासे ही महान् निर्धनताको स्वीकार करते हुए यह निर्धनोंसे भी बढ़कर है।

क्षुत्पिपासाभिभूतेषु ग्रामीणजनकोटिषु ।
अल्पान्नेन निजं देहमस्थिशेषं चकार सः ॥ १२ ॥

(१२) गांवके करोड़ों लोगोंके भूख और प्यासमे अभिभूत होनेके कारण उसने थोड़ा अन्न खाकर अपना शरीर केवल हड्डीपसलीकी अवस्थाको पहुंचा दिया।

पुरा किलाफ्रिकाखण्डं भारतीया हि केचन ।
वाणिज्यव्यवसायार्थमगच्छन् परिवारिणः ॥ १३ ॥

(१३) पुरातन समये कई एक भारतीय जन व्यापारके लिए परिवारसहित आफ्रिका देशमें गए थे।

अथ गच्छत्सु वर्षेषु पीडितास्ते निवासिभिः ।
बोरादिभिः सुगौराङ्गैः कृष्णवर्णदुराग्रहैः ॥ १४ ॥

(१४) कुछ साल बीतनेपर गोरे रङ्गवाले, काले रङ्गके साथ दुराग्रह करनेवाले वहीं रहनेवाले बोरादि जातियोंद्वारा उन्हें पीडा होने लगी।

तद्भयान्मोक्षमिच्छन्तो न्यायधर्मविशारदम् ।
महात्मानमयाचन्त साहाय्यं परमं जनाः ॥ १५ ॥

(१५) उनके भयसे मुक्ति प्राप्त करनेके लिए उन भारतीयोंने न्यायधर्ममें पारंगत महात्मासे सहायता मांगी।

क्लेशार्तानां परं मित्रं सत्यवाग् गान्धिवंशजः ।
बान्धवानां विमोक्षार्थमाफ्रिकादेशमव्रजत् ॥ १६ ॥

(१६) वह दुःखसे सन्तप्त मनुष्योंका परम मित्र, सत्यवचनवाला गांधी वंशमें उत्पन्न, अपने भाईयोंकी मुक्तिके लिए आफ्रिका देशको गया।

जातमन्युः पराक्षेपाद् वसन् विंशतिवत्सरम् ।
स्वबन्धूनां हितार्थाय शत्रुभिर्युयुधेऽभयः ॥ १७ ॥

(१७) दूसरोंके आक्षेपसे क्रुद्ध हुआ वह बीस वर्षतक वहां रहकर अपने भाईयोंके हितके लिए निर्भय होकर शत्रुओंसे लड़ा।

बोरादिभिर्विदेशस्थाः पशुवत्ते खलीकृताः ।
त्रस्ताश्चानेकनिर्बन्धैर्दुःसहैः शासनाभिधैः ॥ १८ ॥

(१८) बोरप्रभृति जातियोंद्वारा विदेशमें रहनेवाले वे लोग पशुओंके समान दुर्व्यवहृत हुए। शासनके नामवाले कई प्रकारके अनेक दुस्सह रुकावटोंसे उन्हें डराया जाता था।

तेन विंशतिवर्षं हि सततं शान्तचेतसा ।
अनुद्वेगकरोपायैरुद्यमः साधुना कृतः ॥ १९ ॥

(१९) उस साधुने सतत शान्तचित्तसे उद्वेग उत्पन्न न करनेवाले उपायों द्वारा बीस वर्ष पर्यंत उद्यम किया।

आङ्ग्ललोकान् स विज्ञाप्य भारतीयपरिस्थितिम् ।
अल्पं फलागमं दृष्ट्वा व्यसृजद्देशमाङ्गलम् ॥ २० ॥

(२०) अंग्रेज लोगोंको भारतीय परिस्थितिसे परिचित कराकर, परिणामको अल्प देखकर उसने अंग्रेजोंके देशका परित्याग कर दिया।

प्रौढेन वयसा युक्तोऽप्यानतः क्लेशसञ्चयैः ।
न्यवर्तत निजं देशं दीनं दुर्भिक्षपीडितम् ॥ २१ ॥

(२१) प्रौढ़ अवस्थावाला होकर भी वह क्लेशसञ्चयोंसे नत होकर दुर्भिक्षसे पीड़ित अपने दीन देशको लौट आया।

ग्रामीणानां क्षुधार्तानां क्षेत्रे क्षेत्रेऽपि निर्जले ।
दृष्ट्वास्थिपञ्जरान् भीमान् विषण्णोऽभूद्दयाकुलः ॥ २२ ॥

(२२) भूखसे सताए हुए ग्रामीणके प्रत्येक जलरहित क्षेत्रमें हड्डियोंके भयंकर पञ्जर देखकर दयार्द्र होकर वह दुःखी हुआ।

इतरैरवधूतानामन्त्यजानामवस्थया ।
द्रवीभूतो महात्मासौ दीनानां गौतमो यथा ॥ २३ ॥

(२३) गौतम अर्थात् बुद्धके समान वह महात्मा दूसरों द्वारा निरादृत दीन हरिजनों (अछूतों) की अवस्थासे पिघल गया।

निर्धनत्वाज्जनुर्भूमेः पारवश्याच्च बान्धवाः ।
तिरस्कृता भवन्तीति प्राज्ञेन किल निश्चितम् ॥ २४ ॥

(२४) जन्मभूमि अर्थात् भारतवर्षके निर्धन होने के कारण तथा परवश अर्थात् अंग्रेजोंके अधीन होनेके कारण भाई अर्थात् स्वदेशीय जन तिरस्कृत होते हैं, यह बात उसी बुद्धिमानने निश्चित कर ली।

वयमाङ्ग्लयुगे बद्धा भविष्यामोऽधिकाधिकम् ।
विवशा दुर्बलाश्चेति घोषितं दूरदर्शिना ॥ २५ ॥

(२५) अंग्रेजोंके बन्धनमें बान्धे हुए हम अधिकसे अधिक विवश और दुर्बल होते जायेंगे। यह बात उस दूरदर्शीने समझ ली।

इहाङ्ग्लैः स्थापितं राज्यं देशलुण्ठनलोलुपैः ।
इत्यस्थिपञ्जरा एव जनानामत्र साक्षिणः ॥ २६ ॥

(२६) यहाँ अर्थात् भारतवर्षमें देशको लूटनेके लिए लोभी अंग्रेजोंद्वारा यह राज्य स्थापित किया गया है। इस बातके साक्षी यहाँके लोगोंकी हड्डीयोंके पञ्जरही दे रहे हैं।

अहो घोरमिदं पापमौदासीन्यं जनेषु वः ।
भोगैश्वर्यप्रसक्तानामतिनिन्द्यं यशोहरम् ॥ २७ ॥

(२७) अहो भोग तथा ऐश्वर्यमें संलग्न आप लोगोंकी लोगविषयक उदासीनता बहुत निन्दनीय तथा यशको हरनेवाली है। यह घोर पाप है।

किमुत्तरं कृतीनां वः परलोके प्रदास्यथ ।
इति राज्याधिकारस्थानपृच्छद्धीरचेतनः ॥ २८ ॥

(२८) इस धीरचेतनावालेने राज्यके अधिकारियोंको यह सवाल पूछा कि आप परलोकमें जाकर अपनी कृतियोंका क्या उत्तर देंगे ?

स्वयान्धवानसौ पौरान्मोहसुप्तानबोधयत् ।
स्वधर्मः परमो धर्मो न त्याज्योऽयं विपद्यपि ॥ २९ ॥

(२९) मोहनिद्रामें सोए हुए अपने नागरिक भाईयोंको उसने जगाया और कहा कि अपना धर्म ही परम धर्म है, विपत्तिमें भी अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए।

कर्षकाणां स्थितिं तेषां कष्टमूलं च वेदितुम् ।
त्यक्तभोगो विपद्बन्धुर्ग्रामे ग्रामे चचार सः ॥ ३० ॥

(३०) विपत्तिमें मित्र वह भोगोंको छोड़कर किसानोंकी स्थिति तथा उनके कष्टके मूलको जाननेके लिये गाँव गाँवमें घूमा।

अनावृष्टया हते शस्ये दुर्भिक्षं समजायत ।
तस्मादथ कराधिक्याद्दीनानां कष्टसम्भवः ॥ ३१ ॥

(३१) अनावृष्टिसे फसलके नष्ट हो जाने पर अकाल पड़ गया। उससे कर बढ़ गया और उससे दीनोंको कष्ट उत्पन्न हो गया।

मासषट्कं निरुद्योगा निवसन्ति कृषीवलाः ।
अत एव हि संवृद्धिर्दारिद्र्यस्य पदे पदे ॥ ३२ ॥

(३२) किसान छः महिने तो बिना काम के रहते हैं इसलिए यहाँ कदम कदम पर दरिद्रता बढ़ती जा रही है।

विधेयं तान्तवं तस्मादल्पलाभमपि ध्रुवम् ।
येन सुष्टूपयोगः स्यात्कालस्येति जगाद सः ॥ ३३ ॥

(३३) वह बोला कि आप लोग सूत कातें; इससे थोड़ा लाभ भी चाहे हो तो भी निश्चित तो है ही। और समयका भी ठीक उपयोग होता है।

कुर्वन्तो नित्यमेवं हि स्वातन्त्र्यं प्राप्स्यथाचिरात् ।
स्वातन्त्र्याद्धि मनुष्याणां प्रियमन्यन्न विद्यते ॥ ३४ ॥

(३४) सदैव ऐसा करनेसे आपको शीघ्रही स्वतन्त्रता मिल जाएगी। आदमियोंके लिए स्वतन्त्रतासे बढ़ कर दूसरी कोई प्रिय वस्तु नहीं है।

अथ चेत्तान्तवं धर्म्यं न करिष्यथ बान्धवाः ।
बद्धाः परयुगे नित्यं दासभावे निवत्स्यथ ॥ ३५ ॥

(३५) हे भाइयो! यदि धागा कातने का धर्म न करोगे तो दूसरोंके बंधनमें बान्धे गए सदैव दासभावमें निवास करोगे।

जीवन्तोऽपि न जीवन्ति परदास्यधुरन्धराः ।
पारतन्त्र्यमुदाराणां मरणादतिरिच्यते ॥ ३६ ॥

(३६) दूसरोंके दास्यरूपी धुराको धारण करते हुए (मनुष्य) जीते हुए भी नहीं जीते हैं। उदार जनोंकी परतन्त्रता मरनेसे भी बढ़कर है।

दासभावे स्थितैः कष्टं सोढव्यमतिदुस्सहम् ।
दासोऽश्नाति स्वकं खाद्यं काकशङ्की पदे पदे ॥ ३७ ॥

(३७) दास्यभावमें पड़े हुए को अति दुस्सह कष्ट भी सहारने पड़ेंगे। दास अपने ही भोजनको कव्वेके समान कदम कदम पर शंकित होकर खाता है।

उत्तिष्ठत ततः शीघ्रं तान्तवे कुरुतोद्यमम् ।
पटकारो जनो येन प्रतिपद्येत तत्फलम् ॥ ३८ ॥

(३८) इसलिए शीघ्र ही उठकर सूतकर्ममें उद्यम करो जिससे कपड़े बनानेवालेको उनका फल मिले।

हस्तनिर्मितवासांसि प्राप्स्यत्येवं जनोऽखिलः ।
ततो देशोदयप्राप्तिरिति भूयो न्यवेदयत् ॥ ३९ ॥

(३९) सब लोगोंको इस प्रकार हाथसे बने वस्त्र मिलेंगे। उससे देशका उदय होगा यह बात उसने फिर बताई।

द्वितीयोऽध्यायः

अटता दक्षिणे देशे यत्नेन परिपश्यता ।
निर्जनो निर्जलो ग्रामः प्रतिपन्नो महात्मना ॥ १ ॥

(१) दक्षिण देशमें घूमते हुए यत्नपूर्वक देखते उस महात्माको निर्जन जलरहित गाँव मिला ।

कस्मिंश्चिद्विजने देशे सोऽपश्यत्काञ्चिदन्त्यजाम् ।
जीर्णाम्बरधरां दीनां कर्शिताङ्गीं मलीमसाम् ॥ २ ॥

(२) किसी निर्जन देशमें उसने किसी शूद्राको देखा जिसने पुराने कपडे पहने हुए थे और जो दीन थी, और मैली थी ।

अमङ्गलां च तां पश्यन्नुद्विग्नोऽभूद्दयाकुलः ।
मालिन्यं ते कुतो भद्रे इति पप्रच्छ सादरम् ॥ ३ ॥

(३) उसे अमङ्गलरूपमें देख कर दयासे व्याकुल हो कर वह उद्विग्न हो गया । 'हे भद्रे, तेरा यह मैलापन किसलिए है ।' उसने आदरपूर्वक पूछा ।

अर्धनग्ना च साऽवादील्लज्जानतमुखी मुनिम् ।
दीनानां दुःसहं कष्टं दुर्बोधं तात सुस्थितैः ॥ ४ ॥

(४) और लज्जासे नीचे मुख किए हुए वह मुनिसे बोली "दिनोंका दु सह कष्ट सम्पत्तिशीलोंकी समझमें मुश्किलसे आता है ।

दश वर्षाण्यहोरात्रं धृतं वस्त्रमिदं मया ।
जलाभावात्तु तन्नित्य न शक्नोमि प्रमार्जितुम् ॥ ५ ॥

(५) "यह वस्त्र दशवर्ष पर्यन्त मैंने धारण किया है । जलाभावके कारण इसे धो नहीं सकती हूँ ।

यदृच्छया जले प्राप्ते वस्त्रस्यार्धं प्रमार्जये ।
शुष्केण वेष्टिता तेन शिष्टमर्धं च धावये ॥ ६ ॥

(६) "जब इच्छानुसार पानी मिल जाता है तो कपडेके आधेको धो लेती हूँ । जब वह सूख जाता है तो उसे छपेट कर शेषके आधेको धोती हूँ ।

न शक्यं तज्जलाभावान्मार्जितुं च पुनः पुनः ।
एकवस्त्रा कथं तात विमला स्यामहं वत ॥ ७॥

(७) "जलके न मिलनेके कारण बारबार धोना नहीं हो सकता। हे तात, एक वस्त्रवाली होनेके कारण स्वच्छ कैसे बनूँ?

मद्वदर्धपरिच्छन्ना जनानां सन्ति कोटयः ।
एकाहाराश्च कृच्छ्रेण धारयन्त्यो निजानसून् ॥ ८ ॥

(८) "मेरे समान आधे नंगे, एक बार खानेवाले, मुश्किलसे अपने शरीरको धारण किए हुए करोड़ों मनुष्य हैं।"

अन्त्यजाया वचः श्रुत्वा करुणं करुणामयः ।
अपनीय निजस्कन्धादुत्तरीयं ददौ मुनिः ॥ ९ ॥

(९) शूद्र लड़कीके करुणामय वचन सुनकर दयालु गान्धीजीने अपने कन्धे से ओढ़नी उतार कर उसे दे दी।

अथ तां विस्मितां नारीं कृपालुर्गान्धिरब्रवीत् ।
कुरु भद्रे सदा सूत्रं हितं ते कर्तने ध्रुवम् ॥ १० ॥

(१०) उस विस्मित नारीको कृपालु गान्धीने कहा, "हे भद्रे! सदा सूत कातो—तुम्हारा कल्याण कातनेमें निश्चित है।"

ध्यायं ध्यायं दशां दीनां बन्धूनां दुःखितोऽभवत् ।
तदुद्धारमनुध्यायन् विनिद्रोऽगमयन्निशाम् ॥ ११ ॥

(११) भाईयों की दीन दशा सोच सोच कर वह दुःखी हो गया। उनके उद्धारको सोचते हुए उसने जागते ही रात गुजार दी।

यावन्न चेष्टिताः सर्वे बन्धवो मे यथोचितम् ।
स्थास्यामि स्वल्पवेशोऽहमिति तेन धृतं व्रतम् ॥ १२ ॥

(१२) जब तक मेरे सब भाई यथोचित रूपसे कपड़े नहीं पहन लेते तब तक मैं थोड़े कपड़े पहनूँगा। यह व्रत उसने धारण कर लिया।

नग्नस्कन्धस्ततः पश्चादाजानुपटवेष्टितः ।
जनहासमनादृत्य त्यक्तभोगो जितेन्द्रियः ॥ १३ ॥

(१३) पीछेसे नंगे कन्धे रखता हुआ, घुटनों तक कपड़ा लगाकर भोगोंको त्याग कर, जितेंद्रिय हो कर संसारकी हँसीकी अवहेलना की।

नगरान्नगरं गच्छञ्छीतोष्णसमवासितः ।
दुर्दैवं ग्राम्यलोकानां पौरेभ्यः स न्यवेदयत् ॥ १४ ॥

(१४) शीत काल तथा गर्मियोमें वही वस्त्र पहनता हुआ गाँव के लोगोंका बुरी प्रारब्ध अर्थात् बुरा हाल उसने नगर निवासियोंको बताया।

लुप्तधर्मैः किलास्माभिरस्पृश्या इति दूषिताः ।
निष्कासिताश्च संसर्गादन्त्यजा भयकम्पिताः ॥ १५ ॥

(१५) हम लोगोंने धर्महीन होकर अन्त्यजों को अस्पृश्य—छूनेके अयोग्य कहकर दूषित किया है। भयसे कॉपते हुए उन लोगोंको हमने संसर्गसे निकाल दिया है।

अथ चित्रं किमत्र स्याद्यदि गोरादयः परे।
अस्मानप्येवमन्येरन्नाफ्रिकास्थान्त्यजानिव ॥ १६ ॥

(१६) इसमें क्या विस्मय है यदि गोरादि दूसरे लोग अफ्रिका में रहनेवालोंको हमें भी शूद्रोंके समान माने ?

अधर्मस्य फलं नूनं दत्तं दैवाज्ञया हि नः ।
तस्मादेव वयं जाता धिकृता राष्ट्रियान्त्यजाः ॥ १७ ॥

(१७) भगवानकी आज्ञाने हमें निश्चयसे अधर्मका ही फल दिया है। इसलिए हम अस्पृश्य राष्ट्रकी तरह धिक्कारे गए हैं।

अहो दशा दुरन्तेयं नोपेक्ष्या मानुषात्मभिः ।
बहिष्कारोऽन्त्यजानां हि भारतस्यैव लाञ्छनम् ॥ १८ ॥

(१८) मनुष्यकी आत्मा रखनेवालोंको अपनी इस बुरी दशाकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। शूद्रोंका बहिष्कार भारतके लिए कलङ्क है।

शूद्रो वा ब्राह्मणो वापि क्षत्रियो वा कृषीवलः ।
देवदृष्ट्या समाः सर्वे विकृतिस्तु नरोद्भवा ॥ १९ ॥

(१९) शूद्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा किसान भगवानकी दृष्टिमें सब समान है। विकार तो मनुष्यने बनाए हैं।

भेदः कृतो मनुष्येण न धात्रा समदर्शिना ।
शीलं चिह्नं सुजातस्य न जातिर्न च जीविका ॥ २० ॥

(२०) भेद तो मनुष्यने किए हैं न कि समदर्शी विधाताने। श्रेष्ठ कुलमें उत्पन्न मनुष्यका चिन्ह शील है, न तो जाति है और न वृत्ति।

अतोऽन्त्यजानवज्ञातुं नाधिकारोऽस्ति कस्यचित् ।
अमी मलिनकर्मार्हा इत्युक्तिर्ननु किल्बिषम् ॥ २१ ॥

(२१) इस लिए हरिजनों का निरादर करने के लिए किसी का भी अधिकार नहीं है। यह मलिन कामके योग्य हैं यह कहना तो पाप ही है।

अतस्तेषां समुद्धारो धर्मो गुरुतमो हि नः ।
तदेव साधनं सम्यग् देशस्योद्धारसिद्धये ॥ २२ ॥

(२२) इसलिए उनका उद्धार ही हमारा सबसे बड़ा धर्म है। देशके उद्धारकी सफलताके लिए यही ठीक साधन है।

दुराग्रहमिमं तस्मादुत्सृज्य कृतनिश्चयाः ।
नक्तन्दिवं प्रयस्यामो दीनानां हितकाम्यया ॥ २३ ॥

(२३) इसलिए निश्चयपूर्वक इस दुराग्रहका परित्याग करके रात दिन हम दीनोंके हितकी इच्छा से यत्न करें।

विद्यालये मठादौ च निषिद्धांस्तानतः परम् ।
निश्शङ्कं स्वीकरिष्यामो निष्कारणबहिष्कृतान् ॥ २४ ॥

(२४) आइंदा विद्यालय तथा मठादि में निषिद्ध एवं बिना कारणसे बहिष्कृत इनको हम निर्भय हो कर स्वीकार कर लेंगे।

इत्युक्त्वा पुनरारेभे वक्तुं कर्षकदुःस्थितिम् ।
अहो पौरा न विज्ञाता युष्माभिः क्षेत्रिणां दशा ॥ २५ ॥

(२५) यह कह कर किसानोंकी दुर्दशा फिरसे कहनी शुरू कर दी—"अहो नागरिको! आप लोगोंने खेती करनेवालोंकी दशाको नहीं जान पाया।

तद्दारिद्र्यमपाकर्तुं तान्त्वं ह्येकसाधनम् ।
अतस्तदुद्यमायैव प्रोत्साहं कर्तुमर्हथ ॥ २६ ॥

(२६) "उनकी दरिद्रताको दूर करनेके लिए सूत ही एकमात्र उपाय है। इसलिए उस उद्यमके लिए आपको बहुत उत्साह करना योग्य है।

धनाढ्या वा दरिद्रा वा समाः सर्वे परस्परम् ।
अतः स्वार्थं परित्यज्य वर्तध्वं धर्मतत्पराः ॥ २७ ॥

(२७) धनी हो या गरीब सब आपसमें समान हैं। इसलिए स्वार्थको छोड़कर आप धर्ममें तत्पर होकर व्यवहार करें।

स्वदेशोदयकामाश्चेत्स्वबान्धवहितेप्सवः ।
तदवगच्छताग्रे नः शोचनीयामधोगतिम् ॥ २८ ॥

(२८) आप यदि अपने देशके उदयकी इच्छा रखते हैं, यदि अपने भाईयोंके हितकी इच्छा रखते है, तो भविष्यमें आनेवाली हमारी अवनत तथा शोचनीय अवस्थाको समझिए।

पुरा कस्मादयं देशः प्रख्यातात्भ्युदयः स्थितः ।
दारिद्र्येणाधुना ग्रस्तः कस्माच्चेति विमृश्यताम् ॥ २९ ॥

(२९) पुरातन कालमें इस भारत देशकी उन्नति क्यों प्रसिद्ध थी? और अब किसलिए दारिद्र्यसे वह ग्रस्त है? यह सोचिए।

परदेशीयवस्त्राणां विधातव्या बहिष्कृतिः ।
विदेशवसनासक्तिः स्वदेशोद्यमनाशिनी ॥ ३० ॥

(३०) परदेशमें बने वस्त्रोंका बहिष्कार करना चाहिए। विदेशीय वस्त्रों में आसक्ति से अपने देश के उद्यम का नाश होता है।

पुराऽऽसन्निह निःसङ्ख्याः पटकारा विशारदाः ।
अंशुकैरुत्तमैर्येषां सम्भृतं निखिलं जगत् ॥ ३१ ॥

(३१) पुरातन कालमें यहाँ अनगिनत चतुर कपडे बनानेवाले थे। जिनके बनाए सुंदर कपडों से समस्त संसार भरपूर रहता था।

इतोऽब्दानां शतात्पूर्वं विच्छिन्ना अधिकारिभिः ।
पटकारकराङ्गुष्ठाः कृतास्ते नष्टजीविकाः ॥ ३२ ॥

(३२) आजसे १०० वर्ष पूर्व अधिकारी वर्गने वस्त्र बनानेवालों के हाथोंके अँगूठे काटकर उनकी आजीविकाका नाश कर दिया था।

ध्वस्तोऽनेन विघातेन देशस्योद्यम उत्तमः ।
पराधीना वयं जाता आङ्ग्लदेशावलम्बिनः ॥ ३३ ॥

(३३) इस चोटमें देशके उत्तम व्यवसायका नाश हो गया था और हम अंग्रेजोंका सहारा लेनेवाले तथा पराधीन हो गये थे।

अथाङ्ग्लासुरसाम्राज्ये धर्महीने प्रतिष्ठिते ।
शिल्पानां भारतीयानां विनाशोऽभूच्छनैः शनैः ॥ ३४ ॥

(३४) फिर अंग्रेजों रूपी राक्षसोंके धर्महीन साम्राज्यकी स्थापना हो जाने पर शनैः शनैः भारतीय कलाओंका नाश हो गया।

पदे पदेऽधिकारो नो विच्छिन्नः परतस्करैः ।
येन व्यक्तित्वहीनाः स्मो हृतपक्षाः खगा इव ॥ ३५ ॥

(३५) विदेशीय चोरोंने कदम कदम पर हमारा अधिकार ऐसा नष्ट किया जिससे हम पक्षहीन पक्षियोंके समान व्यक्तित्वहीन हो गए।

नपुंसका वयं जाता हृतशस्त्रादिसाधनाः ।
पुंस्त्वापहरणान्नान्यः परं शोच्यो हि विप्लवः ॥ ३६ ॥

(३६) शस्त्रादि साधनोंका अपहरण हो जाने पर हम नपुंसक हो गये। पुंस्त्वके अपहरणके समान अन्य कोई शोचनीय विप्लव नहीं है।

कोटयो नरनारीणामुपदेशं महात्मनः ।
निशम्यापुर्महोत्साहं निष्ठां च देशकर्मसु ॥ ४३ ॥

(४३) करोड़ों स्त्रीपुरुषोंने महात्माके उपदेशको सुनकर महान् उत्साह और देशके कामोंमें श्रद्धा प्राप्त की ।

पीता मोहतमस्सुप्ता जागरित्वा शनैः शनैः ।
त्यक्तभोगा अजायन्त मुनेस्तस्यानुयायिनः ॥ ४४ ॥

(४४) महानिद्रामें सोए हुए पुरके लोग धीरे धीरे जागकर भोगोंको छोड़कर उस महात्माके अनुयायी बन गए ।

परदेशीयवस्त्राणि निर्दह्य बहवो जनाः ।
श्वेतखादिधराः सन्तः सञ्जाता देशसेवकाः ॥ ४५ ॥

(४५) बहुतसे लोग परदेशमें बने हुए वस्त्रोंको जलाकर सफेद खादीको धारण करनेवाले देशसेवक बन गए ।

आरब्धं विविधं शिल्पं युवकैर्व्यवसायिभिः ।
गुञ्जनं तन्तुचक्रस्य श्रूयते स्म गृहे गृहे ॥ ४६ ॥

(४६) उद्यमशील युवकोंने नाना प्रकारके शिल्प शुरू किए । चरखेकी झंकार घर घरमें सुनाई देने लगी ।

तृतीयोऽध्यायः

ततो विचारयन् प्रश्नान् बहूनेकाग्रमानसः ।
अहिंसा परमो धर्म इति निर्णयमागतः ॥ १ ॥

(१) तब फिर एकाग्र मन होकर बहुत प्रश्नोंको सोचता हुआ वह इस निर्णयपर पहुँचा कि ' अहिंसा ' सबसे बड़ा धर्म है ।

हिंसां न कोऽपि कुर्वीत मनोवाक्कायकर्मभिः ।
अहिंसयैव सिद्धिः स्यादित्याह स पुनः पुनः ॥ २ ॥

(२) कोई भी मनुष्य मन, वचन अथवा कर्मसे हिंसा न करे । अहिंसासे ही सिद्धि प्राप्त होगी यह बात उसने बार बार बताई ।

सार्धैकशतमब्दानां स्थिता लोकास्तमोवृताः ।
हीना देशाभिमानेन राष्ट्रोन्नतिपराङ्मुखाः ॥ ३७ ॥

(३७) लोग डेढ़सौ वर्षपर्यंत अन्धकारसे घिरे हुए ठहरे रहे। राष्ट्रकी उन्नतिसे पराङ्मुख हुए निज देशके अभिमानसे हीन थे।

विमानिताः स्वदेशे च विदेशे च तिरस्कृताः ।
अधोमुखाश्च दासत्वान्नस्तिताः पशवो यथा ॥ ३८ ॥

(३८) अपने देशमें निरादृत, विदेशमें तिरस्कृत, दासत्वके कारण नीचा मुख किए वे नाकमें नकेल डाले पशुओंके समान थे।

भारताभ्युदयायातः कुरुध्वं दृढनिश्चयम् ।
परदेशीयवस्तूनां विदध्वं च बहिष्कृतिम् ॥ ३९ ॥

(३९) इसलिए भारतवर्षके उत्थानके लिए दृढनिश्चय कर लो। विदेशीय वस्तुओंका बहिष्कार करो।

नैर्बल्यमुपयास्यन्ति बहिष्कारेण चाङ्गलाः ।
तद्व्यापारे च विध्वस्ते स्वातन्त्र्यं नः सुनिश्चितम् ॥ ४० ॥

(४०) बहिष्कारसे अंग्रेज निर्बल हो जाएंगे। उनका व्यापार नष्ट हो जाने पर हमारा स्वातन्त्र्य निश्चित रूपसे आएगा।

खादिवस्त्रात्परं वासो नैव धार्यं कदाचन ।
स्वार्थत्यागात्स्वदेशार्थं नान्यच्छ्रेयो हि विद्यते ॥ ४१ ॥

(४१) खादी वस्त्रको छोड़कर दूसरा वस्त्र नहीं पहनना चाहिए। स्वार्थत्यागके अलावा अपने देशका कल्याण नहीं है।

इत्यादिशन् महात्मासौ देशबन्धून् पुरे पुरे ।
प्रोत्साहं हतचेतस्सु लोकेषु समयुक्षयत् ॥ ४२ ॥

(४२) नगर नगरमें अपने भाईओंको आदेश देते हुए उन महात्माजीने मरे हुए मनवाले लोगोंमें उत्साह जगा दिया।

कोट्यो नरनारीणामुपदेशं महात्मनः ।
निशम्यापुर्महोत्साहं निष्ठां च देशकर्मसु ॥ ४३ ॥

(४३) करोड़ों स्त्रीपुरुषोंने महात्माके उपदेशको सुनकर महान् उत्साह और देशके कामोंमें श्रद्धा प्राप्त की।

पौरा मोहतमस्सुप्ता जागरित्वा शनैः शनैः ।
त्यक्तभोगा अजायन्त मुनेस्तस्यानुयायिनः ॥ ४४ ॥

(४४) महानिद्रामें सोए हुए पुरके लोग धीरे धीरे जागकर भोगोंको छोड़कर उस महात्माके अनुयायी बन गए।

परदेशीयवस्त्राणि निर्दह्य बहवो जनाः ।
श्वेतखादिधराः सन्तः सञ्जाता देशसेवकाः ॥ ४५ ॥

(४५) बहुतसे लोग परदेशमें बने हुए वस्त्रोंको जलाकर सफेद खादीको धारण करनेवाले देशसेवक बन गए।

आरब्धं विविधं शिल्पं युवकैर्व्यवसायिभिः ।
गुञ्जनं तन्तुचक्रस्य श्रूयते स्म गृहे गृहे ॥ ४६ ॥

(४६) उद्यमशील युवकोंने नाना प्रकारके शिल्प शुरू किए। चरखेकी झंकार घर घरमें सुनाई देने लगी।

तृतीयोऽध्यायः

ततो विचारयन् प्रश्नान् बहूनेकाग्रमानसः ।
अहिंसा परमो धर्म इति निर्णयमागतः ॥ १ ॥

(१) तब फिर एकाग्र मन होकर बहुत प्रश्नोंको सोचता हुआ वह इस निर्णयपर पहुँचा कि 'अहिंसा' सबसे बड़ा धर्म है।

हिंसां न कोऽपि कुर्वीत मनोवाक्कायकर्मभिः ।
अहिंसयैव सिद्धिः स्यादित्याह स पुनः पुनः ॥ २ ॥

(२) कोई भी मनुष्य मन, वचन अथवा कर्मसे हिंसा न करे। अहिंसासे ही सिद्धि प्राप्त होगी यह बात उसने बार बार बताई।

अथ सन्त्रासिते लोके चम्पारण्याभिधे स्थले ।
आङ्ग्लैः प्रबलोन्मत्तैरुद्भूत्कष्टसञ्चयः ॥ ३ ॥

(३) चम्पारण्य नामके स्थानपर प्रकट बलसे उन्मत्त हुए अंग्रेजोंसे लोगोंके सताए जानेपर बहुत दुःखके समूहकी उत्पत्ति हुई।

दुःखग्रस्तस्य लोकस्य साहाय्यार्थं जगाम सः ।
प्रतिस्थलं जितात्मायमहितद्वेषवर्जितः ॥ ४ ॥

(४) वह दुःखग्रस्त लोगोंकी सहायताके लिए शत्रुओंमें द्वेषबुद्धि न रखता हुआ प्रत्येक स्थानमें गया।

वित्रस्तं कर्मकृल्लोकं कुस्वामिभ्यो विमोच्य सः ।
न्यवर्तत निजावासं नीतिशास्त्रविशारदः ॥ ५ ॥

(५) डरे हुए कर्मचारियोंको बुरे स्वामियोंसे छुटकारा दिलाकर नीतिशास्त्रमें चतुर वह अपने स्थानको लौट गया।

ततो जनपदान् कैरानुपयातो विपद्गतान् ।
स्वबान्धवान् समुत्सृज्य विवशान्मरणोन्मुखान् ॥ ६ ॥

(६) तदनन्तर निहत्थे मरणोन्मुख अपने भाइयोंको छोड़ कर वह विपत्तिमें पड़े हुए केरा जिल्हेमें पहुँचा।

एवं स्थिते कथं दातुं मन्दभाग्याः कृषीवलाः ।
दारिद्र्यरक्षसा ग्रस्ताः शक्नुयुर्भूकरं पणम् ॥ ७ ॥

(७) ऐसी परिस्थितिमें मन्दभाग्यवाले किसान दरिद्रतारूपी राक्षससे ग्रस्त हुए मतिजात जमीनका टैक्स (कर) कैसे दे सकेंगे।

करादानस्य दारिद्र्यं हेतुरासीन्न चान्यथा ।
राजापि सरसः शुष्कात्पयः पातुं न पारयेत् ॥ ८ ॥

(८) कर देनेका दरिद्रताको छोड़कर अन्य कोई कारण नहीं था। पर तालाबके सूखे हो जाने पर राजा भी पानी नहीं पी सकता है।

एकवर्षावकाशं ते प्रार्थयन्त कृषीवलाः ।
करुणं करदानाय निर्घृणानधिकारिणः ॥ ९ ॥

(९) कृषीवलोंने दुःखपूर्वक निर्दयी अधिकारियोंसे कर देनेके लिए एक वर्षका अवकाश माँगा।

तद्याचनां तिरस्कृत्य पाषाणहृदयास्तु ते ।
कराऽदाने हरिष्यामः क्षेत्राणीति व्यतर्जयन् ॥ १० ॥

(१०) उन पत्थरके समान कठोर मनवालोंने उनकी प्रार्थनाका तिरस्कार करके ऐसी धमकी दी कि करके न देनेमें हम खेतोंको छीन लेंगे।

शोचनीयां कथामेतामाकर्ण्य स दयानिधिः ।
द्रवीभूतश्चिरं तस्थौ ध्यायंस्तन्मुक्तिसाधनम् ॥ ११ ॥

(११) वह दयाका समुद्र अर्थात् महादयालु महात्मा इस शोचनीय कथाको सुनकर पिघल गया और उनके मोक्षके साधनको सोचने लगा।

ततोऽधिकारिणो द्रष्टुं महात्माऽभिजगाम सः ।
वाचोयुक्तिभिरर्थ्याभिः प्रयेते च प्रसादने ॥ १२ ॥

(१२) फिर अधिकारियोंको देखनेके लिए वह महात्मा पहुँचा और इसने युक्तिपूर्ण वचनों तथा प्रार्थनाओंसे उनको प्रसन्न करनेका यत्न किया।

स्वयत्ने विफलीभूते सुवादैरपि संयमी ।
अन्यायिनो नृपप्रेष्यान् विरोद्धुं निश्चिकाय सः ॥ १३ ॥

(१३) संयमशील महात्माने सुन्दर वचनोंसे भी अपने यत्न विफल देखकर अन्यायी राजाके नोकरोंके साथ विरोध करनेका निश्चय किया।

स्वनिश्चयानुरोधेनाऽऽकारयच्च महासभाम् ।
तत्रानेकैरुपन्यासैर्विदधे कार्यनिर्णयान् ॥ १४ ॥

(१४) और अपने निश्चयके अनुरोधसे महासभा करवाके वहाँ कई प्रस्तावों द्वारा कार्यका निर्णय किया।

राजभृत्यास्तु दुर्वृत्ताद् व्यरमन्न मनागपि ।
भूयोऽपि कृषिकान् दीनान् बलात्कारैरपीडयन् ॥ १५ ॥

(१५) राजाके नौकर अर्थात् सरकारी अफसर तो अपने बुरे व्यवहारसे जरा भी न हटे। किन्तु उन्होंने दीन किसानोंको बलात्कारोंसे दुःखी किया।

अथ न्याय्यसमाचारो महात्माऽन्वर्थनामकः ।
सत्याग्रहस्य तत्त्वानि व्याचख्यौ ग्रामवासिनाम् ॥ १६ ॥

(१६) तब न्यायपूर्वक आचरण करनेवाले नामानुसारी गुणोंवाले महात्माने गाँवके निवासियोंको सत्याग्रहके सार तत्त्व बताए।

स्वधर्मं प्रतिपद्यध्वं पुरुषत्वं च रक्षत ।
इत्यब्रवीत्स धर्मात्मा स्वबन्धूनाफ्रिके यथा ॥ १७ ॥

(१७) अपने धर्मका पालन करो । पुरुषत्वकी रक्षा करो। ये बातें अपने भाइयोंको वैसे ही बताई जैसे आफ्रिकामें बताई थी।

राज्याधिकारिणां वर्गे लोकानामहितोद्यते ।
प्रजानामधिकारोऽस्ति बलात्तेषां विरोधने ॥ १८ ॥

(१८) राज्यके अधिकारियोंके प्रजाके अहितके लिए उद्यत होनेपर प्रजाको उनका बलपूर्वक विरोध करनेका अधिकार है।

एकतश्च स्थितो मानी राजभृत्यो महाबलः ।
अन्यतश्च प्रजावर्गो नतकायो भयार्दितः ॥ १९ ॥

(१९) एक ओर तो अभिमानी महाबली राजाका भृत्य (-वर्ग) है और दूसरी ओरसे दुःखी, झुका हुआ, भयग्रस्त प्रजावर्ग था।

अपमानमिमं सोढुं कथं शक्नुथ बान्धवाः ।
त्यक्त्वाधिकारिणो भीतिमुत्तिष्ठत सपौरुषम् ॥ २० ॥

(२०) हे भाइयो ! आप इस अपमानका सहारन कैसे कर सकते हैं ? आप अधिकारियोंके भयको छोड़कर बलपूर्वक उठिये।

अहिंसका जितक्रोधाः प्रवर्तध्वं स्वकर्मणि ।
शस्त्रास्त्रबलहीनानां बलं सत्याग्रहः परम् ॥ २१ ॥

(२१) हिंसारहित क्रोध जीतकर, अपने अपने कामोंमें प्रवृत्त हो जाइए। शास्त्र और अस्त्रके बलसे विहीन मनुष्योंका महान् बल सत्याग्रह है।

भङ्क्तव्यं शासनं दुष्टं प्रदातव्यो न भूकरः ।
सोढव्यः सर्वथा दण्डः सत्याग्रहमुपाश्रितैः ॥ २२ ॥

(२२) सत्याग्रहके आश्रय लेनेवालोंको दुष्ट शासन तोड़ना होगा, भूकर नहीं देना, दण्ड सर्वथा सहारना होगा।

अद्भुतं फलमेतस्य प्राप्स्यामो नचिराद् ध्रुवम् ।
इति प्रोत्साहयन्नाह स गुर्जरकृषीवलान् ॥ २३ ॥

(२३) गुर्जर किसानोंको प्रोत्साहित करते हुए उन्होंने कहा कि हमें शीघ्रही इसका अद्भुत फल मिलना निश्चित है।

प्रान्तस्यास्य जनः कृत्स्नः सत्यवीर्यादिभिर्गुणैः ।
अनुचक्रे स्वकान्बन्धूनाफ्रिकाखण्डवर्तिनः ॥ २४ ॥

(२४) इस प्रान्तके समस्त जनोंने सत्य वीर्यादि गुणोंसे अपने आफ्रिकादेशनिवासी भाइयोंका अनुसरण किया।

हृतगोभूमयश्चापि सत्याग्रहसुनिष्ठिताः ।
ग्राम्यास्तस्थुरनुद्विग्नास्त्यक्तभोगार्थसंपदः ॥ २५ ॥

(२५) सत्याग्रहमें श्रद्धा रखनेवाले गाँवके लोग अपने भोगसामग्रीका त्याग कर गौ और जमीनके हर जाने पर भी अनुद्विग्न रहे।

शासकानां तमस्छन्ने हृदि ज्ञानारुणोदये ।
वर्षान्ते प्राप संसिद्धिं सत्याग्रहमहाव्रतम् ॥ २६ ॥

(२६) अन्धकारसे ढके हुए शासकोंके हृदयमें ज्ञानरूपी सूर्यके उदय हो जाने पर सत्याग्रहका महान व्रत वर्षके अन्तमें सफल हुआ।

करदानासमर्थेभ्यो देयः संवत्सरोऽवधिः ।
करदानक्षमेभ्यस्तु परिग्राह्यः करो द्रुतम् ॥ २७ ॥

(२७) जो लोग 'कर' देनेमें असमर्थ हैं उन्हें तो एक सालकी अवधि (मोहलत) देनी चाहिए। जो कर देनेमें समर्थ हैं उनसे तो जल्दी ही ले लेना चाहिए।

यथास्वं हृतवस्तूनि प्रतिदेयानि सत्वरम् ।
इति शासितुराज्ञाऽभूद्यथा लोकैरपेक्षितम् ॥ २८ ॥

(२८) जैसे लोगोंकी इच्छा थी तदनुसार ही शासककी आज्ञा हुई कि अपहरण की गई वस्तुएं जिसकी हैं उन्हें जल्दी लौटा देनी चाहिए।

सर्वतः सफलीभूते गुर्जरेषु महाव्रते ।
हर्षविस्मयसङ्कीर्णं प्रजानामभवन्मनः ॥ २९ ॥

(२९) गुर्जरोंके सत्याग्रह व्रतके सब ओर सफल हो जाने पर प्रजाका मन हर्ष तथा विस्मयसे पूरित हो गया।

ग्रामीणाः कैरदेशस्य धैर्यसत्त्वादिसद्गुणैः ।
मानास्पदमजायन्त भारतस्याखिलस्य च ॥ ३० ॥

(३०) धैर्य और सत्त्वादि गुणोंसे कैरा जिल्हा निवासिजन समस्त भारतके मानके पात्र हो गए।

कीर्तिस्सत्याग्रहस्यापि प्रसृताऽखिलभारते ।
लोकानां मतभेदेऽपि तत्प्रभावः सुमानितः ॥ ३१ ॥

(३१) सत्याग्रहका यश समग्र भारतवर्षमें फैल गया। लोगोंके मतभेद होनेपर भी उसका प्रभाव अच्छी तरहसे माना गया।

चतुर्थोऽध्यायः

ततस्तीरे सबर्मत्या नाम्ना सत्याग्रहाश्रमम् ।
महात्मा स्थापयामास सदनं सानुयात्रिकः ॥ १ ॥

(१) इसके बाद साबरमती नदीके किनारे उस महात्माने अपने साथियोंके साथ सत्याग्रहाश्रमरूपी घरकी स्थापना की ।

सत्यमेव प्रमाणं यन्मनोवाक्कायकर्मभिः ।
तस्मिन् पुण्यनिवासे तद्यथार्थो हि स आश्रमः ॥ २ ॥

(२) क्योंकि उस पुण्य निवासमें मन, वचन तथा शरीरसे सत्यही प्रमाण है; इसवास्ते वह आश्रम यथार्थ नामवाला था ।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यापरिग्रहौ ।
स्वदेशवस्तुनिष्ठा च निर्भीती रुचिसंयमः ॥ ३ ॥

(३) अहिंसा, सत्य, किसीकी वस्तु न चुराना, ब्रह्मचर्य, किसी भी वस्तुका संग्रह न करना, स्वदेशमें बनी वस्तुओंमें श्रद्धा, नीडरपन, रुचिमें संयम,

अन्त्यजानां समुद्धारो नवैतानि व्रतानि हि ।
भारतोत्कर्षसिद्ध्यर्थमाश्रमस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

(४) हरिजनोंका समुद्धार—ये नौ व्रत महात्माके आश्रममें भारतके अभ्युदयकी सिद्धिके लिए हैं ।

निर्ममो नित्यसत्त्वस्थो मिताशी सुस्मिताननः ।
सुकलत्रः शिशुप्रेमी पितेवाश्रमवासिनाम् ॥ ५ ॥

(५) मोहरहित, सदैव सत्त्वगुणमें स्थिति रखनेवाला, थोडा खानेवाला, हसमुख अनुरूप, पत्नीका पति, बच्चोंके साथ प्रेम करनेवाला, आश्रमनिवासियोंको पितासमान,

ध्यायन् क्लेशान् स्वबन्धूनां तद्धितैकपरायणः ।
विराजते मुनिर्बुद्धो बोधिद्रुमतले यथा ॥ ६ ॥

(६) अपने भाइयोंके क्लेशोंको सोचता हुआ, उनके ही हितमें लगातार लगा हुआ, बोधी वृक्षके नीचे बैठे बुद्धके समान शोभा दे रहा है।

साक्षात्सत्यप्रदीपोऽयं दीप्यतेऽखिलभारते ।
स्वबन्धूनामपाकुर्वन् हृदयान्मोहजं तमः ॥ ७ ॥

(७) अपने भाइयों हृदयोंसे मोहजनित अन्धकारको दूर करता हुआ वह साक्षात् सत्यका प्रदीप ही भारतवर्षमें जगमगा रहा है।

बलं सर्वबलेभ्योऽपि सत्यस्यैवातिरिच्यते ।
सत्यवानबलः श्रेयान् सबलात्सत्यवर्जितात् ॥ ८ ॥

(८) सब बलोंसे सत्यका ही बल बढ़ कर है। सत्यवादी दुर्बल होता हुआ भी असत्यवादी बलवानसे अच्छा है।

तद्ये चरन्ति धर्मेण प्रजा वा राज्यशासकाः ।
समृद्धिर्जायते तेषामन्येषां तु क्षयो ध्रुवः ॥ ९ ॥

(९) इस लिए जो प्रजा अथवा शासक धर्मका आचरण करते हैं उनकी उन्नति होती है। दूसरोंका तो नाश निश्चित है।

इति तत्रभवान् गान्धिराख्याति सहवासिनः ।
अनुयायिजनांश्चान्यान् वचसा लेखतोऽपि च ॥ १० ॥

(१०) यह बात पूज्य गान्धीजी अपने साथियों, अनुयायिजनों, तथा दूसरोंको भी वचन तथा लेख द्वारा बताते हैं।

असह्यैरद्भुतालोकैः सद्गुणैर्धर्मसञ्चितैः ।
विराजते महात्माऽसौ ताराभिर्गगनं यथा ॥ ११ ॥

(११) असंख्य अद्भुत चमत्कृतिवाले, धर्मपूर्वक सञ्चित शुभगुणोंसे यह महात्मा ऐसे शोभा देता था जैसे तारागणोंसे आकाश शोभा देता है।

महात्मा प्राह—

अधर्ममपि दृष्ट्वा यः प्रतिबन्द्धुं न वाञ्छति ।
सत्ये सत्यपि यो भीत्या न च तत्प्रतिपद्यते ॥ १२ ॥

(१२) महात्माजी बोले-जो मनुष्य अधर्मको देख कर भी उसे रोकना नहीं चाहता है, और सत्यके होते हुए भी जो डरसे उसका ग्रहण नहीं करता है,

क्लीबयोरुभयोश्चापि निष्फलं जीवनं तयोः ।
स्वार्थनाशभयाद्यौ रक्षतोऽनृतजीवनम् ॥ १३ ॥

(१३) उन दोनों ही नपुंसकोंका जीवन निष्फल है । क्योंकि स्वार्थके नाश होनेके डरसे वे झूठे जीवनकी रक्षा करते हैं।

सहिष्णुरप्यवस्याहं सर्वथास्मि निरोधकः ।
सत्यस्य प्रतिपत्तास्मि भयदस्यापि निश्चितम् ॥ १४ ॥

(१४) सहिष्णु होता हुआ भी मैं पापका पूर्ण रूपसे निरोधक हूँ । सत्यके भयंकर होनेपर भी मैं निश्चितरूपसे उसका अनुयायी हूँ ।

बलात्कारोऽपि साधीयान्न चाध्यात्मिकभीरुता ।
अहिंसा निजपापघ्नी दमनी च द्विषामपि ॥ १५ ॥

(१५) आध्यात्मिक भीरुपनसे बलात्कार अच्छा है । अहिंसा अपने पापको नाश करनेवाली है और शत्रुओंका दमन करनेवाली है ।

अहिंसा पालयेन्मर्त्यो धीरो मृत्युमुखेऽपि सन् ।
यस्य धैर्यमिदं नास्ति स कुर्वीत बलात्कृतिम् ॥ १६ ॥

(१६) धैर्यशील मनुष्य मृत्युके मुखमें भी गया हुआ अहिंसाका पालन करे । जिसका धैर्य न हो वह बलसे काम ले ।

हिंसामपि समाश्रित्य वरं मृत्युमुखे गतम् ।
न पुनः स्वात्मरक्षार्थं कृत निन्द्यं पलायनम् ॥ १७ ॥

(१७) हिंसाका आश्रय लेकर मौतके मुखमें जाना अच्छा है न कि अपनी रक्षाके लिए निन्दनीय भागना ।

करोति मनसा हिंसां स हि भीरुः पलायिता ।
आत्मनो मृत्युकातर्यादात्महिंसां करोति च ॥ १८ ॥

(१८) जो मनुष्य मनसे हिंसा करता है वह डरपोक है और भगोडा है। और अपनी मौतके डरसे वह अपनी ही हिंसा करता है।

अस्य सात्त्विकधर्मस्य समुद्धारविधायकः ।
शनैः शनैर्बलं प्राप्य दुर्निवारो भविष्यति ॥ १९ ॥

(१९) यह सात्विक धर्म अर्थात् सत्याग्रहरूपी धर्म, इसका उद्धार करनेवाला शनैः शनैः बल पाकर अजय बन जाता है।

अत एव मया दत्तं नाम सत्याग्रहाश्रमः ।
सत्यानुयायियुक्ताया विनीतवसतेर्मम ॥ २० ॥

(२०) इसलिए मैंने अपने नाचीज निवासस्थानको 'सत्याग्रहाश्रम' नाम दिया है, क्योंकि यह सत्यके ही अनुयायीयोंसे युक्त है।

इति सत्यादिधर्माणाममोघं बलमद्भुतम् ।
वर्णयन् ग्राहयामास व्रतानि सुबहून् गुरुः ॥ २१ ॥

(२१) इस प्रकारसे सत्यादि धर्मोंके कभी निष्फल न होनेवाले अद्भुत बलका वर्णन करते हुए उसने बहुत सारोंसे उन व्रतोंका ग्रहण करवाया।

न केनाप्यहमासायं करिष्ये चन्द्रवासरे ।
सम्भाषणमिति प्राज्ञो मौनव्रतमधारयत् ॥ २२ ॥

(२२) सायकाल तक सोमवारके दिन मैं किसीसे भी बात न करूंगा यह सोच कर बुद्धिमानने मौन धारण किया।

अतः प्राप्ते गरिष्ठेऽपि कार्ये तं नैव चिक्लिशुः ।
तस्य व्रतसमाप्तिं तु प्रतीक्षाञ्चक्रिरेऽनुगाः ॥ २३ ॥

(२३) इसलिए भारी अर्थात् आवश्यक काम पडने पर भी उसके अनुयायिगण उसे कष्ट नहीं देते थे। प्रत्युत उसके व्रतकी समाप्तिकी प्रतीक्षा करते थे।

जगतः सुव्यवस्थार्थं निर्णेतुं च स्वतां स्वतः ।
संप्रवृत्तमिदं युद्धमिति ख्यापितमाङ्गलैः ॥ २ ॥

(२) अंग्रेजोंने यह बात मशहूर कि संसारकी सुव्यवस्था करनेके लिए और अपनी वस्तुका अपने आप ही निर्णय करनेके लिए यह युद्ध शुरू किया गया है ।

यूयं प्राप्स्यथ युद्धान्ते स्वातन्त्र्यं चिरमीप्सितम् ।
साहाय्यं कुरुतास्माकमित्यासीद्राजवाचिकम् ॥ ३ ॥

(३) राजाने अर्थात् अंग्रेजी सरकारने यह वचन दिया कि तुम लोगोंको अर्थात् भारतीयोंको युद्धके अन्तमें चिराभीष्ट स्वतन्त्रता मिलेगी इस लिए हमारी सहायता करो ।

अथाङ्ग्लच्छलनिःशङ्को देशकल्याणतत्परः ।
आङ्ग्लान् सेवितुमारेभे सपक्षान्नीतिकोविदः ॥ ४ ॥

(४) नीतिमें चतुर (गान्धीजी) देशके कल्याणमें उद्यत अंग्रेजोंके कपटकी शंका न करता हुआ अपने पक्षवालोंके साथ अंग्रेजोंकी सेवा करने लगा ।

क्षतलोकस्य सेवार्थं तेन सङ्घो विनिर्मितः ।
युध्यध्वमाङ्ग्लराष्ट्रार्थं बान्धवा इति चाब्रवीत् ॥ ५ ॥

(५) जख्मी लोगोंकी सेवाके लिए उसने सङ्घ बनाया । और यह भी कहा कि भाईयो ! अंग्रेज राज्यके लिए आप लड़ाई कीजिए ।

साम्राज्यस्योपकारे हि भारतस्य हितं स्थितम् ।
इति मत्वागमद्गान्धिर्देहल्यां युद्धसंसदम् ॥ ६ ॥

(६) साम्राज्यकी भलाईमें ही भारतकी भलाई है यह समझ कर गान्धी देहलीमें (होनेवाली) युद्धकी परिषदमें गए ।

स्वार्थलाभमथ त्यक्त्वा सेवका देशवत्सलाः ।
व्यसृजन् परसंग्रामे निजप्राणान् सहस्रशः ॥ ७ ॥

(७) देशसे प्रेम करनेवाले हजारों सेवकोंने स्वार्थको छोड़ कर दूसरोंके युद्धमें प्राणोंका त्याग किया ।

समाप्ते तु महायुद्धे प्रजामर्दनदुस्सहम् ।
देशे दास्यमगाद् वृद्धिं स्वातन्त्र्यस्य तु का कथा ॥ ८ ॥

(८) महायुद्धके समाप्त हो जाने पर प्रजाको कुचल डालनेवाला दुस्सह दासत्व बढ़ गया। फिर स्वतंत्रताकी तो बात ही कहाँ?

गान्धिश्चक्रे शठैराङ्ग्लैर्भारतं प्रेक्ष्य वञ्चितम् ।
सत्याग्रहसमारम्भमाफ्रिकायां पुरा यथा ॥ ९ ॥

(९) दुष्ट अंग्रेजों द्वारा भारतको ठगा हुआ देखकर गान्धीने जैसे पहले आफ्रिकामें सत्याग्रह किया था वैसे (यहाँ भी) शुरू किया।

विरम्यतां निजोद्योगादिति लोकान्निबोध्य च ।
तपोमिलिङ्घनैर्ध्यानैरहिंसाव्रतमाचरत् ॥ १० ॥

(१०) अपने अर्थात् जो काम आप व्ययसाय रूपमें करते हैं उसमे आप हट जाइए, अर्थात् काममें असहयोग करें। लोगोंको यह समझाकर (स्वयं) तप, उपवास और ध्यान द्वारा अहिंसा व्रतका पालन किया।

यथावत्प्रस्तुते युद्धे बलात्कारविवर्जिते ।
देहल्यां वणिजां सत्याग्रहिणां च रणोऽभवत् ॥ ११ ॥

(११) बलात्कारसे रहित युद्धके यथावत् अर्थात् जैसा होना चाहिए वैसे ही प्रस्तुत हो जाने पर देहलीमें सत्याग्रह करनेवालों और व्यापारियोंका युद्ध हुआ।

वणिक्पथेषु लोकेषु मिलितेषु कुतूहलात् ।
आग्नेयास्त्राण्यसृज्यन्त राजभृत्यैर्यदृच्छया ॥ १२ ॥

(१२) बाजारोंमें तमाशा देखनेवालोंके एकत्रित होने पर सरकारी कर्मचारियोंने अपनी इच्छानुसार ही गोलियाँ चलाई।

प्रोत्साहयितुमुद्विग्नानहिंसाया दृढव्रते ।
सेवितुं च क्षतान् गान्धिर्देहलीमगमद्द्रुतम् ॥ १३ ॥

(१३) उद्विग्न लोगोंको अहिंसाके दृढ व्रतमें प्रोत्साहित करनेके लिए तथा जख्मी लोगोंकी सेवा करनेके लिए गान्धीजी जल्दी ही देहलीको गए।

निरुद्धे शासकादेशादर्धमार्गे महात्मनि ।
उत्थितस्तीव्रसंरम्भो धृतसत्यव्रतेष्वपि ॥ १४ ॥

(१४) आधे रास्तेमें सरकारी आज्ञासे महात्माजीके रोक दिए जाने पर सत्याग्रहियोंमें भी तीव्र संक्षोभ पैदा हो गया।

प्रव्राजितौ समे काले भारतादेशनायकौ ।
किचल्यूसत्यपालाख्यावमृत्सरनिवासिनौ ॥ १५ ॥

(१५) उसी समय 'किचलू' तथा 'सत्यपाल' नामके अमृतसरके रहनेवाले दो देशनायकोंको देशनिकाला मिला।

याचमानस्तयोर्मुक्तिं राजप्रतिनिधिं ततः ।
ताडितो जनसंमर्दो रक्षकैः कारणं विना ॥ १६ ॥

(१६) उन दोनों (नेताओं) की मुक्ति की राजप्रतिनिधिसे याचना करता हुआ जनसमूह बिना किसी कारणके सिपाहियों द्वारा पीटा गया।

रक्षिणामपचारेण क्रोधान्धा जनताऽभवत् ।
आङ्ग्लान् पञ्च निहत्याथ राजहर्म्याण्यनाशयत् ॥ १७ ॥

(१७) सिपाहियोंके दुर्व्यवहारसे जनता क्रोधसे अन्धी हो गई। पाँच अंग्रेजोंको मार कर सरकारी इमारतोंका नाश कर दिया।

आङ्गली प्रमदा काचित्क्रुद्धलोकैः प्रताडिता ।
रक्षिता त्वितरैः कैश्चिन्नीताऽभून्निर्भयं स्थलम् ॥ १८ ॥

(१८) क्रोधमें आए लोगोंने किसी एक अंग्रेज रमणीको पीटा। और कई दूसरोंने उसकी रक्षा की (तथा) उसे निर्भय स्थलको ले गए।

ततो दिनद्वयादाङ्ग्लो डायरो नाम दुर्नरः ।
महासेनामधिष्ठाय सेनानीर्द्रुतमागमत् ॥ १९ ॥

(१९) इसके बाद दो दिनमें डायरनामका दुष्ट अंग्रेज जनरल महासेनाका सेनापतित्व लेकर शीघ्र आ गया।

तत्र चोपस्थिते तस्मिञ्जनवृन्दमपासरत् ।
गृहीताश्च जनाः केचित्पुनः शान्तिः प्रतिष्ठिता ॥ २० ॥

(२०) उसके वहाँ आ जाने पर लोगोंका समूह हट गया। कई लोग पकड़ लिए गए। फिर शान्ति स्थापित हो गई।

पौराण्डिण्डिमघोषेण समाहूय दुरात्मकः ।
जनयात्राः सभाश्चापि निषेधामीत्यगर्जयत् ॥ २१ ॥

(२१) वह दुरात्मा नक्कारेकी आवाजसे पुरनिवासियोंको बुलाकर गर्जा कि लोगोंका यातायात और सभा (सम्मेलन) बन्द करता हूं।

विना मेऽनुज्ञया कोऽपि न गच्छेन्नगराद्बहिः ।
इति च ख्यापयामास नररूपी स राक्षसः ॥ २२ ॥

(२२) उस नररूपी राक्षसने यह आज्ञा दी कि मेरी अनुमतिके बिना नगरसे बाहर कोई न जाए।

कृतेऽपि घोषणे तस्मिन्नयुतं तीर्थसेविनः ।
पुरेऽमृतसरे धर्मोत्सवाय मिलितास्तदा ॥ २३ ॥

(२३) ऐसी घोषणा के किए जानेपर भी करोड़ों तीर्थ-सेवा करनेवाले (लोग) उस समय धर्मके उत्सवके लिए अमृतसर शहरमें इकट्ठे हुए।

जाल्यन्वालाख्य उद्याने प्राकारेणावृते किल ।
तत्र तेषूपविष्टेषु गुलिकावृष्टिरापतत् ॥ २४ ॥

(२४) वहाँ चाहरकी दीवारसे घिरे हुए जाल्यानवाला नामक उद्यानमें बैठे हुए लोगोंपर गोलियोंकी वर्षा आ गिरी।

आग्नेयसंनिपातोऽयं प्रावर्तत चमूपतेः ।
घोराज्ञया नृशंसस्य विना पूर्वप्रबोधनम् ॥ २५ ॥

(२५) निर्दयी सेनापतिकी भीषण आज्ञासे बिना पहले बताए ही गोलियोंका सनिपात आरम्भ हुआ।

बन्दीकृताः स्थले तस्मिन् यात्रिकास्ते भयार्दिताः ।
परस्परं निपीड्योच्चैरक्रन्दन् भयविह्वलाः ॥ २६ ॥

(२६) उस स्थान पर भयसे पीडित यात्री बन्दी बना लिए गए । वे (लोग) भयसे व्याकुल परस्पर जोरसे गले लगकर रोने लग गए ।

निर्दोषोऽयं जनस्तोम इति ज्ञात्वापि निश्चितम् ।
नैव स्वकर्मणो घोराद् व्यरमत्स पिशाचकः ॥ २७ ॥

(२७) उस जनसमूहको पूरी तरहसे निर्दोष समझकर भी वह नरपिशाच अपने घोर कर्मसे न हटा ।

यत्र गाढो जनौघोऽभूत्तत्रैवास्कन्दमाचरत् ।
इमे लोकाः शरव्यं मे प्रशस्तमिति कत्थनः ॥ २८ ॥

(२८) जहाँ ही लोगोंकी भीड होती थी वहीं छलांग लगाता । वह बकता था कि 'ये लोग मेरे तीरोंके सुन्दर निशाने हैं' ।

शासता तेन सेनान्या दत्ताऽऽज्ञेति भयङ्करी ।
यत्राक्रान्ताऽऽङ्गली तत्र सर्पवदुरसा जनाः ॥ २९ ॥

(२९) उस शासक अंग्रेजने भयंकर आज्ञा दी थी कि जहाँ अंग्रेज युवतीपर हमला हुवा था वहाँ लोग पेट पर आडे हो कर सरक सरक कर चलें ।

यः कोऽपि दैवसंयोगाद् घोराज्ञां तामलङ्घयत् ।
हा कष्टं मन्दभाग्योऽसौ ताडितो निर्दयं बत ॥ ३० ॥

(३०) अहो ! कष्टकी बात है कि जहाँ कोई दैवयोगसे अर्थात अनजानमें उस घोर आज्ञाका उल्लंघन करता था वह मन्दभाग्य निर्दयतापूर्वक पीटा जाता था ।

अध्यापकाश्च शिष्याश्च समाहूता दिने दिने ।
अनिदूरनिवासेभ्यस्तत्क्लेशानामनादरात् ॥ ३१ ॥

(३१) प्रतिदिन अध्यापक और शिष्योंके क्लेशोंकी अवहेलना करके उन्हें बहुत दूर दूरके घरोंसे बुलाया जाता था ।

अथाज्ञामनु संप्राप्ता गुरुशिष्याः सहस्रशः ।
पैशाचवृत्तिना तेन राजमार्गे प्रताडिताः ॥ ३२ ॥

(३२) आज्ञाके अनुसार आए हुए हजारों अध्यापकों और शिष्योंको उस पिशाचवृत्तिवालेने राजमार्गमें बुरी तरहसे पीटा।

दारुणानामसंख्यानां पापानां दारुणं फलम् ।
परत्र लप्स्यते दुष्टः कात्र शङ्का भवेन्ननु ॥ ३३ ॥

(३३) असंख्य दारुण पापोंका दारुण फल दुष्टको और कहीं अर्थात् परलोकमें मिलेगा इसमें क्या शंका हो सकती है?

घोरकृत्ये कृतेऽप्यस्मिण्डायरेण दुरात्मना ।
साम्राज्याधिकृता नेनं दोषास्पदमजीगणन् ॥ ३४ ॥

(३४) ऐसा घोर कुकर्म करने पर भी दुरात्मा डायरको सरकारी अधिकारियोंने दोषी न ठहराया।

प्रत्युतायमभूदज्ञै राजगृह्यैः सुमानितः ।
सज्जनैस्त्वाङ्ग्लदेशेऽपि निन्दितश्च तिरस्कृतः ॥ ३५ ॥

(३५) प्रत्युत अज्ञानी राजगृह्यवालोंसे वह सम्मानित हुआ। पर सज्जनोंने तो अंग्रेजोंके देशमें भी उसकी निन्दा की और तिरस्कार किया।

अयोग्यो ह्यधिकारेण योजितश्चेन्नराधमः ।
नाशं करोति सर्वत्र शस्त्रपाणिः कपिर्यथा ॥ ३६ ॥

(३६) अयोग्य और नीच नर अधिकारमें नियुक्त होने पर शस्त्र हाथमें लिए बन्दरके समान सर्वत्र नाश करता है।

तेनापूर्वप्रसङ्गेन गान्धिर्भूत्वातिदुःखितः ।
कीर्तिमुद्रां नृपाल्लब्धां प्रत्यार्पयत निर्भयम् ॥ ३७ ॥

(३७) इस अपूर्व घटनासे अति दुःखित हुए गान्धीजीने निर्भीक होकर राजाकी ओरसे संप्राप्त कीर्तिमुद्रा उसे लौटा दी।

रवीन्द्रनाथपूर्वा ये मानिताश्चक्रवर्तिना ।
तेऽपि सम्मानमुद्राणां परित्यागमकुर्वत ॥ ३८ ॥

(३८) रवीन्द्रनाथादि (लोग) जो सम्राट द्वारा सम्मानित हुए थे उन्होंने भी सम्मानमुद्राओंका परित्याग किया।

राष्ट्रसंसदि वार्षिक्यां निर्णया विविधाः कृताः ।
महात्मनोऽनुमोदेन नेहरूलज्पतादिभिः ॥ ३९ ॥

(३९) वार्षिक राष्ट्रसभामें (कॉंग्रेसमें) नेहरू तथा लजपतरायने महात्माजीके अनुमोदनसे कई प्रकारके निर्णय किए।

आङ्ग्लवस्तुबहिष्कारः प्रत्याख्यानं करस्य च ।
धिक्कारो राजभृत्यानां धृतमेतद्व्रतत्रयम् ॥ ४० ॥

(४०) अंग्रेजी वस्तुओंका बहिष्कार, कर देनेसे इन्कार, राजकीय अर्थात् अंग्रेजी सरकारके नौकरोंको धिक्कारना, ये तीन व्रत धारण किए।

षष्ठोऽध्यायः ।

सान्त्वनार्थं ततोऽस्माकं युवराज इहागतः ।
भारतीयास्तु दुःखार्ता औदासीन्येन गुण्ठिताः ॥ १ ॥

(१) तब हमारी सान्त्वनके लिए युवराज यहाँ आया। भारतीय लोग तो दुःखसे पीडित (होनेके) औदासीन्यसे लपेटे हुए थे।

मुम्बापुरीं नरेशस्य कुमारे समुपागते ।
सर्वे पौरजनास्तस्थुर्निजोद्यमपराङ्मुखाः ॥ २ ॥

(२) राजकुमारके बम्बई नगरमें पहुँचने पर सब नगरनिवासी अपने कामोंसे पराङ्मुख होकर खड़े हो गए।

प्रविष्टे नगरं तस्मिन् सार्वभौमकुमारके ।
रथ्याः शून्या अवर्तन्त संवृतानि गृहाणि च ॥ ३ ॥

(३) सम्राटके लड़केके नगरमें प्रवेश करने पर गलियां खाली हो गई और घर बन्द हो गए।

दुष्कर्मनिरतेष्वेवमयोग्येष्वधिकारिषु ।
राजा वा राजपुत्रो वा पुरा प्रियतमोऽपि सन् ॥ ४ ॥

(४) अयोग्य अधिकारियोंके इस प्रकार दुष्कर्ममें निरत होने पर राजा हो या राजपुत्र हो जो पहले अत्यन्त प्रिय भी रह चुका हो,

दृष्ट्वा दुःखार्तलोकानां प्रतिभात्यतिगर्हितः ।
अत एव द्विपीवामी जातास्तत्र पराङ्मुखाः ॥ ५ ॥

(५) दुःखसे सन्तप्त लोगोंकी दृष्टिमें वह अति निन्दनीय प्रतीत होता है । इस लिए ये लोग उससे ऐसे पराङ्मुख हुए जैसे शत्रु हो ।

पारसीका नृपासक्ता आङ्ग्लेया जनास्तथा ।
स्वागतं राजपुत्राय चक्रिरे स्वार्थतत्पराः ॥ ६ ॥

(६) राजाको प्यार करनेवाले स्वार्थी पारसियों तथा आंग्रजोंने राजकुमारका स्वागत किया ।

भारतं शासितुं शक्यं धर्मेणैव हि केवलम् ।
न स्वार्थलोलुपत्वेन न च निर्घृणभावतः ॥ ७ ॥

(७) भारतवर्षका शासन न तो स्वार्थके लोभसे और नही निर्दयतासे हो सकता है । केवल धर्मसे ही भारतका शासन हो सकता है ।

भिन्नप्रकृतिभिर्लोकैर्विदेशे बलमिच्छुभिः ।
ज्ञेया जनमनोवृत्तिः प्रमाणं हि प्रजाहितम् ॥ ८ ॥

(८) विदेशमें बल चाहनेवाले भिन्न प्रकृतिवाले लोगोंको प्रजाकी मनोवृत्तिको ही इसके हितके लिए प्रमाण समझना चाहिए ।

अज्ञानाद्भवति द्वैधं द्वैधाद्भवति शत्रुता ।
शत्रुत्वाद्विप्लवो भावी ततो नाशः प्रशासितुः ॥ ९

(९) अज्ञानसे द्वैध होता है । द्वैधसे शत्रुता उत्पन्न होती है । शत्रुतासे विप्लव होता है । उससे राज्य करनेवालेका नाश होता है ।

मत्ताः स्वार्थप्रधानाश्च वाणिजा आङ्गला इमे।
संस्कृतिं भारतस्यास्य प्राक्तनीं ज्ञातुमक्षमाः ॥ १० ॥

(१०) स्वार्थमें लिप्त (स्वार्थही है प्रधान जिनमें) अभिमानी ये अंग्रेजी व्यापारी इस भारतवर्षकी पुरानी संस्कृतिको समझनेमें असमर्थ हैं।

पुरा भारतवर्षेऽस्मिन् सर्वविद्याकलाश्रये।
प्रख्याताभ्युदये राजत्याङ्ग्ला अज्ञा इव स्थिताः ॥ ११ ॥

(११) जब प्राचीन कालमें यह भारतवर्ष सब विद्याओं और कलाओंका आधार होनेके कारण अभ्युदयके लिए प्रसिद्ध था तब अंग्रेज लोग अज्ञानियोंके समान रहते थे।

क्व नः प्राचीन उत्कर्षो वेदशास्त्रादिभूषितः।
क्व तत्कालदशाऽऽङ्ग्लानां मृगचर्मैकवाससाम् ॥ १२ ॥

(१२) वेदशास्त्रादिसे विभूषित हमारी प्राचीन उन्नति कहां और मृगचर्म मात्र वस्त्रोंको पहननेवाले अंग्रेजोंकी उस समयकी दशा कहा?

स्वभावजं क्व सौजन्यं भारतस्य हि सात्त्विकम्।
क्वाङ्गलानां नु पारुष्यमविश्वासोऽसहिष्णुता ॥ १३ ॥

(१३) कहा भारतवासियोका सत्वगुणोत्पन्न स्वाभाविक सौजन्य, और कहां अंग्रेजोंकी कठोरता, अविश्वास और असहिष्णुता?

जनौ कथमिमौ भिन्नौ स्वभावाच्छिक्षया तथा।
विनानुरागबन्धेन भवेतां सहवर्तिनौ ॥ १४ ॥

(१४) स्वभाव तथा शिक्षासे ये दो भिन्न भिन्न लोग प्रेमके बंधनके बिना कैसे सहयोगी बने?

धर्मकञ्चुकिनां हन्त परद्रव्यापहारिणाम्।
भारतीयाः स्वमौर्ख्येण द्विषामामिषतां ययुः ॥ १५ ॥

(१५) अहो कष्ट है कि भारतवर्षके लोग अपनी मूर्खताके कारण धर्मके वेशधारी भारतवर्षका धन चुरानेवाले शत्रुओंके शिकार बन गए थे।

उच्चावचेषु लोकेषु कष्टं संजायते सदा ।
मतान्तरासहिष्णुत्वाद् धर्मद्वेषस्य चोद्भवात् ॥ १६ ॥

(१६) ऊपरके तथा निम्नस्तरके लोगोंमें मतान्तरकी असहिष्णुता तथा धर्मद्वेषके उत्पन्न होनेके कारण सदैव कष्ट पैदा हो जाता है।

हिन्दूमुसलमानानां वैरित्वं नाशकारि नः ।
पारसीकैश्च विद्वेषो देशोत्कर्षस्य का कथा ॥ १७ ॥

(१७) हिन्दु तथा मुसलमानोंका वैर हमारे नाशका कारण है; और पारसियोंके साथ द्वेष चलता है; तो उन्नतिकी कथा कैसे हो?

उक्तपूर्वो हि सम्मानो राजपुत्रे प्रदर्शितः ।
आङ्ग्लैः पारसीकैश्च कुतोऽपि स्वार्थकारणात् ॥ १८ ॥

(१८) पहले बताया गया राजपुत्रमें प्रदर्शित आदर अंग्रेजों तथा पारसियोंके इसी स्वार्थही कारण था।

अथोद्विग्नाश्च संक्रुद्धा भारतस्येतरे जनाः ।
हिन्दूमुसलमानाश्च पारसीकैरयुत्सत ॥ १९ ॥

(१९) भारतके अन्यलोग हिन्दु और मुसलमान उद्विग्न और क्रुद्ध होकर पारसियोंके साथ युद्ध करने लगे।

अनादृतस्वदेशास्ते पारसीकास्तिरस्कृताः ।
जातिभ्यामितराभ्यां च ताडिताः पशवो यथा ॥ २० ॥

(२०) अपने देशका अनादर करनेवाले पारसियोंको दूसरी दोनो जातियोंने तिरस्कृत किया और पशुसमान पीटा।

दुष्कर्मणा स्वबन्धूनां महात्माभूद्विलज्जितः ।
नृशंसा डायरप्रख्या इमे हन्तेत्यदूयत ॥ २१ ॥

(२१) अपने भाईयोंके दुष्कर्मसे महात्मा विलज्जित हुए। ये लोग डायरादि समान निर्दयी है इतना समझकर उन्हे दुःख हुआ।

शान्त्या साधयितुं राज्यमयोग्या मम बान्धवाः ।
इति तत्पापशुद्ध्यर्थं स्वयं लङ्घनमाचरत् ॥ २२ ॥

(२२) मेरे भाई अर्थात् भारतीय जनता शान्तिपूर्वक राज्य लेनेमें असमर्थ है। इससे उस पापकी शुद्धिके लिए उन्होंने स्वयं उपवास किया।

सप्तमोऽध्यायः

अथो दिनेषु गच्छत्सु घोरः कलिरुपस्थितः ।
मलबारविभागेषु मोपलाहिन्दुलोकयोः ॥ १ ॥

(१) कुछ दिन जाने पर मलबार विभागोंमें मोपला और हिन्दु लोगोंमें घोर युद्ध उपस्थित हुआ।

चतुर्वर्षं हि तज्जन्यमचलन्मूढवृत्तयोः ।
यत्र नाशं गता व्यर्थं नराः पञ्चशतोत्तराः ॥ २ ॥

(२) मूढवृत्तिवाली उन दोनो जातियोंमें पैदा हुआ युद्ध चार वर्ष पर्यंत चलता रहा–जिसमें व्यर्थमें पाँचसौसे ऊपर व्यक्ति मारे गये।

यथा यथा प्रजामध्ये जायते भिन्नधर्मतः ।
द्वेषस्तथा तथोत्कर्षो देशस्य परिहीयते ॥ ३ ॥

(३) धर्मभेदका आश्रय लेकर जब जब प्रजामें द्वेष होता है वैसे वैसे ही अर्थात् तदनुसार ही देशके उत्कर्षकी हानी होती है।

पारतन्त्र्याभिभूतस्य देशस्याभ्युदयः कुतः ।
अतः स्वातन्त्र्यमाप्तव्यमैक्यं स्वातन्त्र्यसाधनम् ॥ ४ ॥

(४) परतन्त्रा से अभिभूत देशकी उन्नति कैसी हो सक्ती है। इस लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनी चाहिए–स्वतन्त्रताके लिए साधन एकता है।

अविरोधः परं शस्त्रं परतन्त्रीकृतात्मनाम् ।
तदभावे महाँल्लाभो लुब्धस्यैव हि शासितुः ॥ ५ ॥

(५) जिन लोगोंने अपनेको परतन्त्र कर दिया है उनका बड़ा हथ्यार परस्परका अविरोध है। उसके अभावमें लोभी शासकका निश्चयहीसे लाभ है।

अज्ञानमूलमुत्सृज्य परस्परविरोधनम् ।
युयुत्सून् योजयेद्भ्रातॄन् विनीतो देशसेवकः ॥ ६ ॥

(६) विनीत देशसेवकको चाहिए कि वह अज्ञानमूलक परस्परके विरोधको छोड़कर युद्धकी इच्छा करनेवाले भाईयोंकी मेल कराए।

अथाल्पेनैव कालेन चौरिचौराभिधे स्थले ।
महत्सङ्कटमुद्भूतं सत्याग्रहविदूषकम् ॥ ७ ॥

(७) थोड़े ही कालमें फिर सत्याग्रहको दूषित करनेवाला चौरि चौरा नामक स्थानमें एक महान संकट पैदा हो गया।

सभायां प्रतिरुद्धायां राज्यतन्त्राधिकारिभिः ।
धृष्टैः कैश्चिददह्यन्त सजीवा राजरक्षिणः ॥ ८ ॥

(८) राज्यतन्त्रके अधिकारीयों द्वारा जब सभा रोकी गई तो कई ढीठ मनुष्योंने राज्यकी रक्षा करनेवाले अर्थात् सिपाहियोंको जीते जीते ही जला दिया।

अयशस्यमिदं कर्म प्रतिकर्तुं प्रशासकाः ।
उपलक्षद्वयं नृणां चिक्षिपुर्बन्धनालये ॥ ९ ॥

(९) शासकोंने इस निन्दनीय कर्मका प्रतिकार करनेके लिए कोई दो लाखके लगभग मनुष्योंको कैदमें डाल दिया।

अनुष्ठितेऽस्य कृत्येऽस्मिन् हाहाकारः समुत्थितः ।
निशम्य तं महात्मासौ विषादं परमं गतः ॥ १० ॥

(१०) ऐसा काम हो जाने पर हाहाकार खड़ा हो गया इसे सुनकर वे महात्मा परम दुःखको प्राप्त हुए।

धृतव्रतोऽपि कालज्ञः प्रमाथश्चाप्रमाथिता ।
यथायोग्यं नु सश्चार्याविस्यपि व्यमृशत्स्वयम् ।। ११ ।।

(११) सत्याग्रहरूपी व्रतको धारण करनेवाले गांधीजी मनमें यह सोचने लगे कि हिंसा और अहिंसा दोनोंका व्यवहार अलग अलग होना चाहिये।

स्वदेश्या भीरुका नेति विप्लवोऽयमसाधयत् ।
प्रमाथं शक्नुयुः कर्तुमिति गान्धिरमन्यत ।। १२ ।।

(१२) इस विप्लवने प्रमाणित कर दिया है कि अपने देशवासी भीरु नहीं हैं। गान्धीजीने यह स्वीकार कर लिया कि हमारे लोग युद्ध करनेमें समर्थ होंगे।

परतन्त्रैर्बलात्कारात्सिद्धिः खलु न लभ्यते ।
शान्तियुक्तो वरं ध्वंसो न जयोऽपि प्रमाथजः ।। १३ ।।

(१३) परतन्त्र मनुष्योंको बलात्कार अर्थात् युद्ध द्वारा सिद्धि नहीं मिल सकती है। शान्तिसे युक्त नाश भी अच्छा है न कि युद्ध द्वारा प्राप्त विजय।

एवं जानन्नपि प्राज्ञोऽबोधयद्राष्ट्रियाञ्जनान् ।
प्रयोगोऽसहकारस्य त्यज्यतामिति सर्वतः ।। १४ ।।

(१४) बुद्धिमान मनुष्यने इतना समझकर अपने देशीय भाइयों-को समझाया कि असह योगका प्रयोग सब जगह ही छोड़ देना चाहिए, अर्थात् बन्द कर देना चाहिए।

निषेधनमिदं श्रुत्वा विस्मितास्ते बभाषिरे ।
परिवर्तननाशोऽस्मादहो नूनं भविष्यति ।। १५ ।।

(१५) यह निषेध सुनकर विस्मित होकर वे बोले कि इससे परिवर्तन का नाश निश्चित है।

तत उग्रे समारब्धे परिवर्तनकर्मणि ।
नतशीर्षाः पुरा लोकाः सद्य एवोन्मुखा बभुः ।। १६ ।।

(१६) परिवर्तन कार्यके शुरू हो जाने पर जो लोग पहले सिर झुकाए हुए थे वे शीघ्र ही सामने आगए।

उद्धता येऽभवन्नाङ्ग्लास्ते नम्रत्वमुपागताः ।
मानुष्यं भारतीयानामङ्गीचक्रुस्ततः परम् ॥ १७ ॥

(१७) जो अंग्रेज उद्धत थे, वे नम्र हो गए। इसके पीछे उन्होंने भारतीयोंकी मनुष्यता स्वीकार कर ली।

ये पुरा तमसाक्रान्ता देशभक्तिविवर्जिताः ।
जडा दास्यैकनिष्णाता नानाधर्मविभाजिताः ॥ १८ ॥

(१८) जो पहले अंधकारसे आक्रान्त थे अर्थात् जो ज्ञानरहित थे इसी लिए देशभक्तिसे हीन थे। जड़ थे—केवल दासत्वमें ही स्थापित थे, कई प्रकारके धर्मोंसे विभाजित थे।

अलसा मूढविश्वासाः प्राप्य तेऽद्य प्रबोधनम् ।
गता अद्भुतमेकत्वमित्याङ्ग्लैरवलोकितम् ॥ १९ ॥

(१९) जो आलसी तथा मूढ विश्वासवाले थे वे भी आज जागृतिको पाकर अद्भुत प्रकारके एकत्वको प्राप्त कर चुके हैं। यह बात अंग्रेजोंने देख ली।

अद्य यावन्मदोन्मत्ता आङ्गला मृदवोऽभवन् ।
तिरस्कृतांश्च देशीयान्प्राचीकमन्त वेदितुम् ॥ २० ॥

(२०) आज तक जो अंग्रेज अभिमानसे उन्मत्त थे वे अब कोमल हो गए और वे अनादृत भारतीय जनोंको समझनेकी अभिलाषा करने लगे।

अन्यदेव हि संजातं भारतं परिवर्तनात् ।
दासभावं मुमुक्षुभ्यस्त्रासमाङ्ग्लाः प्रपेदिरे ॥ २१ ॥

(२१) परिवर्तन द्वारा भारतवर्ष कुछ दूसरी ही वस्तु बन गया है। दासत्वसे मुक्ति पानेवालोंसे अंग्रेज डरने लगे।

भाषणस्य कृते गान्धी राजद्रोहीति निश्चितः ।
आत्मसंयमयुक्तोऽपि कारागारे प्रवेशितः ॥ २२ ॥

(२२) भाषण करनेके कारण गान्धीको राजद्रोही समझा गया। आत्मसंयमसे युक्त होता हुआ भी वह कैदमें डाल दिया गया।

अश्रद्धयोऽपि नेतृणां ग्राम्याणां स प्रियोऽभवत् ।
कृष्णस्यैवावतारोऽयमिति तैश्च सुपूजितः ॥ २३ ॥

(२३) नेताओं (सरकारी अफसरों) द्वारा अनादृत होता हुआ भी वह ग्राम्य लोगोंका प्रेमपात्र बना। उन्होंने उसे कृष्णका ही अवतार समझ कर उसकी पूजा की।

समदुःखसुखः शान्तः सिद्धार्थ इव मानितः ।
निन्ये वर्षद्वयं कुर्वन् कर्तनं बन्धनालये ॥ २४ ॥

(२४) दुःख और सुख में एक समान, शान्त प्रकृतिवाला, सिद्धार्थ के समान पूजित (महात्मा) ने कैदखाने में ही चरखा कातते दो वर्ष बिता दिए।

अथ भिन्नमतैः कैश्चिन्नायकैर्नेहरूमुखैः ।
स्वराज्यपक्ष इत्याख्यः सङ्घ एको विनिर्मितः ॥ २५ ॥

(२५) अब (मोतीलाल) नेहरू आदिक कई भिन्न मतवालों ने 'स्वराज पार्टी' नाम का एक सङ्घ बनाया।

वयं लप्स्यामहे राज्यं यथान्यायं च धर्मतः ।
तत्सिद्धये नेतरोपाय इति तैर्निश्चितं जनैः ॥ २६ ॥

(२६) हम न्यायपूर्वक और धर्मपूर्वक राज्य को प्राप्त करेंगे। उस की सिद्धी के लिए और कोई उपाय नहीं है यह उन लोगों ने निश्चित कर लिया।

विमुक्ताय द्विवर्षान्ते व्याधिहेतोर्महात्मने ।
मालवीयादिभिर्मुख्यैर्निश्चयोऽयं निवेदितः ॥ २७ ॥

(२७) बिमार हो जाने के कारण दो वर्ष के बाद जब महात्मा को मुक्ति मिली तो मालवीयादि मुख्यों ने यह निर्णय बताया।

तस्मिन्नये विरुद्धेऽपि निजाभिमततत्त्वतः ।
स्वराज्यनयवादिभ्यो गान्धिः स्वानुमतिं ददौ ॥ २८ ॥

(२८) अपने स्वीकृत सिद्धान्तसे यह नीति विरुद्ध होने पर भी स्वराज्यनीतिवालों को गान्धी ने अपनी सहमति दे दी।

शस्त्रोपचारनिस्सत्त्वो विषण्णः कार्यनाशतः ।
न्यवर्तताश्रमं शान्तं महात्मा विगतस्पृहः ॥ २९ ॥

(२९) शस्त्र के प्रयोग के कारन दुर्बल, कार्यनाश होनेसे दु खी वह महात्मा अपने शान्त आश्रम को लौटा।

अष्टमोऽध्यायः

त्यक्तराष्ट्रीयकार्योऽपि स्वदेशोदयलालसः ।
स्थितः कुर्वन्निजं धर्मं मुनिर्विर्षचतुष्टयम् ॥ १ ॥

(१) मुनि अर्थात् मुनितुल्य गान्धी राष्ट्रीय (राजकीय) कार्य को छोडे हुए भी स्वदेश के उदय की इच्छा रखता हुआ चार वर्ष पर्यंत अपना धर्म पालन करता रहा।

लोकाज्ञानं निराकर्तुं सुग्रन्थास्तेन मुद्रिताः ।
ख्यापितानि स्वतत्त्वानि वृत्तपत्रमुखेण च ॥ २ ॥

(२) लोगों के अज्ञान के दूर करने के लिए उसने सुन्दर ग्रन्थ छपवाए और समाचार पत्रोंद्वारा अपने सिद्धान्तो का प्रचार किया।

लौकिका बहवस्तेन लोकोद्धारचिकीर्षया ।
ब्रह्मचर्यादयो धर्मा उपदिष्टाः पृथक् पृथक् ॥ ३ ॥

(३) लोगों के उद्धार करने की इच्छा से उसने ब्रह्मचर्यादि लौकिक धर्मों का पृथक् पृथक् उपदेश किया।

दीनानामेव कल्याणं परमं ध्यायता सदा ।
महात्मना दिवारात्रं कृतस्तेभ्यः परिश्रमः ॥ ४ ॥

(४) सदा दीन जनों के हित कोही बहुत ध्यान में देखते हुए उन्होंने दिन रात उन के लिए परिश्रम किया।

अन्याय्या नियमा हन्त शासकैर्बहवः कृताः ।
न तु केनापि ते मान्या इत्यादिक्षन्त नायकाः ॥ ५ ॥

(५) शोक है कि शासकों ने बहुत सारे नियम न्यायविरुद्ध बनाए हैं। नायकों ने यह दीक्षा दी कि वे नियम किसी को भी मानने नहीं चाहिए।

राज्ये न्याया विधीयन्ते सुव्यवस्थां हि रक्षितुम् ।
सुखार्थमेव लोकानां न तान् पीडयितुं वृथा ॥ ६ ॥

(६) राज्य में सुव्यवस्था बनाए रखने केही लिए न्याय किए जाते हैं। लोगों के सुखही के लिए (वे बनाए जाते हैं), उन्हें वृथा दुःख देने के लिए नहीं।

नियमाश्चेत्प्रणीयन्ते बलाज्जनविमर्दकाः ।
लोकानामधिकारोऽस्ति प्रभङ्क्तुं तान् हि निर्भयम् ॥ ७ ॥

(७) यदि नियमों का निर्माण बलपूर्वक लोगों को सताने के लिए किया हो तो लोगों को उन्हें निर्भीक होकर तोड़ने का अधिकार है।

अधर्म्या यदि सह्यन्ते नियमाः सुचिरं जनैः ।
तदा विवर्धते तेजः शासितुः स्वार्थकारिणः ॥ ८ ॥

(८) यदि लोग धर्मविहीन नियमों को बहुत देर तक सहारते हैं तो इससे स्वार्थी शासकों का तेज बढ़ता है।

सहमानाश्चिरं त्रासं भारं धुर्या वृषा इव ।
प्रत्यहं दुर्बला भूत्वा ध्रुवं प्राप्स्यन्त्यधोगतिम् ॥ ९ ॥

(९) चिरकाल तक पञ्चाली का भार उठाए हुए बैलों के समान दरको देर तक सहारते २ वे दुर्बल होकर नीच अवस्था को प्राप्त होंगे।

हितार्थमेव लोकस्य व्यवस्यति मुनौ सदा ।
ज्वलत्क्लेशाग्निकुण्डे हि त्रिंशत्कोटिजनाः स्थिताः ॥ १० ॥

(१०) मुनि अर्थात् गांधीजी के सदैव लोगों के हितही के लिए यत्न करने पर तीस करोड़ लोग क्लेशाग्नि के कुंड में जल रहे थे।

अथाङ्ग्लेयसमायुक्तः सङ्घो भारतमागतः ।
राजनीतिप्रवीणेन सैमनेन स्वधिष्ठितः ॥ ११ ॥

(११) राजनीति में चतुर "सैमन" की अध्यक्षता में अंग्रेजों से समायुक्त एक सङ्घ भारतवर्ष में आया।

समासदास्त्रिवर्गेभ्यो वृताः सचिवमण्डलात् ।
उदारोद्यमिनोर्द्वौ द्वौ स्थितिपालस्य च त्रयः ॥ १२ ॥

(१२) सङ्घके समासद सचिव मण्डल के तीनों ही दलों से अर्थात् उदार (लिबरपार्टी), उद्यमी (लेबरपार्टी), और स्थितिपाल (कनज़रवेटिव पार्टी) से थे। उदार के दो, उद्यमी के दो, और स्थितिपाल के तीन थे।

सञ्जातो दासभावो नः सदोषादाङ्ग्लशासनात् ।
पुरा ते निर्णयन्तीति प्रतीक्षां चक्रिरे जनाः ॥ १३ ॥

(१३) अंग्रेजी शासनके दोषपूर्ण होने से ही हमारा दासभाव हुआ है। इस बात का निर्णय पहले होगा—यह सोचकर लोग इन्तज़ार करने लगे।

नैकोऽपि भारतीयोऽस्य सङ्घस्य सभिकः कृतः ।
किमतश्चित्रमाङ्ग्लाश्चेदस्मद्दुःखपराङ्मुखाः ॥ १४ ॥

(१४) इस सङ्घ का सदस्य भारतीयों में से एक भी नहीं था। इसलिए यदि अंग्रेज हमारे दुःखों से पराङ्मुख हैं अर्थात् दुःखों को नहीं समझते तो इस में विस्मय ही क्या है?

सैमनीयस्य सङ्घस्य जिज्ञासोर्भारतस्थितिम् ।
बहिष्कारः कृतो लोकैर्निश्चितं नायकैर्यथा ॥ १५ ॥

(१५) नायकों के निश्चयके अनुसार भारतकी स्थिति को जानने के लिए आए हुए सैमनीय सङ्घ का लोगोंने बहिष्कार किया।

सैमनप्रमुखे सङ्घे मुम्बानगरमागते ।
श्मशानमिव साक्षात्तत् कृष्णध्वजमयं बभौ ॥ १६ ॥

(१६) सैमन की अध्यक्षता में आए हुए इस सङ्घ के बम्बई नगर में पहुँचने पर वह नगर श्मशान के समान साक्षात् कृष्णध्वजमय हो गया।

बद्धवातायनद्वारां निवृत्तनिखिलोद्यमाम्।
पुरीं शून्यामपश्यंस्ते दग्धां पाम्पेपुरीमिव ॥ १७ ॥

(१७) उस (सङ्घ) को जल चुकी हुई पाम्पेय पुरी के समान वह नगरी दिखाई दे रही थी। लोगोंने खिड़किया और दरवाज़े बन्द कर लिए थे और वे समस्त उद्यम अर्थात् कामसेंद चुके थे।

लोकसान्त्वनकामेन सैमनेन नियन्त्रिताः।
देश्याः केचिद्विनिर्मातुं कार्यसम्पादिकां सभाम् ॥ १८ ॥

(१८) लोगों के सान्त्वना की इच्छा रखते हुए सैमनने कार्यकारिणी सभा को बनाने के लिए कई एक भारतीय लोगों को बुलाया।

आमन्त्रणमिदं कैश्चिदल्पैरेवोररीकृतम्।
इतरे तु विदूरस्था अतिष्ठन्निरपेक्षकाः ॥ १९ ॥

(१९) इस निमन्त्रण को थोड़े ही लोगों ने स्वीकार किया। दूसरे तो निरपेक्ष होकर दूर ही ठहरे रहे।

बाह्यतः केवलं कृत्वा भारतस्यावलोकनम्।
परमार्थमविज्ञाय स्वदेशं समितिर्ययौ ॥ २० ॥

(२०) सभा अर्थात् सङ्घ बाहरसे ही केवल भारतवर्ष को देखकर परमार्थ अर्थात् वास्तविकताको बिना समझे अपने देशको चली गई।

पुनः सप्तर्षयस्तेऽमी स्वदेशप्रियकाङ्क्षिणः।
वृथैव भारतं देशमचिरेण समागताः ॥ २१ ॥

(२१) फिर ये सात ऋषि अपने देश का हित चाहनेवाले शीघ्र ही व्यर्थ में भारत को आए।

रक्षितं चाङ्गलराज्येन स्वतन्त्रं भारतं भवेत्।
इतीष्टमाङ्गलैः कैश्चिदुदारैः समदृष्टिभिः ॥ २२ ॥

(२२) कई एक उदार समदृष्टिवालों अंग्रेजोने यह चाहा कि अंग्रेजोंद्वारा रक्षित यह देश स्वतन्त्रता को प्राप्त करेगा।

आङ्ग्लदेशहितायैव प्रेषिताः पुरुषा इमे ।
ग्रसितुं भारतं वर्ष नापनेतुं तदापदः ॥ २३ ॥

(२३) अंग्रेजोंके देश की भलाई के लिए भेजे गए थे लोग भारत को खाने (आए थे) न कि उसकी आपदाओंको दूर करने (आए थे)।

कस्त्यजेन्मानुषोऽपूर्वं स्वेच्छया परमं निधिम् ।
अनायासेन सम्प्राप्तं प्रतिष्ठोत्कर्षकारणम् ॥ २४ ॥

(२४) कौन मनुष्य मानको बढानेवाले अपने आप ही अनुपम और बिना किसी उद्यम से प्राप्त बडे खजाने को छोडे ?

स्वदेशमथ निर्याते तस्मिन्सैमनसप्तके ।
अतृप्तिर्भारते वृद्धा द्वयोः प्रीतेस्तु का कथा ॥ २५ ॥

(२५) उस सैमन सप्तकके अपने देशको चले जाने पर भारतवर्ष में असन्तोष हो गया । दोनों के प्रेम की तो बात ही क्या ?

सैमनाद्या अतस्तेऽपि चक्रगोष्ठ्या निराकृताः ।
भारतीयाङ्ग्लयुक्ताया आङ्ग्लसाम्राज्यमन्त्रिभिः ॥ २६ ॥

(२६) इस लिए अंग्रेज साम्राज्यद्वारा सैमनादि वे लोग अंग्रेजों तथा भारतीयोंकी गोलमेज कोन्फ्रेंस बाहर किए गए।

नवमोऽध्यायः

अत्रान्तरे महासङ्घो राष्ट्रियो मिलितोऽभवत् ।
कलकत्तापुरेऽसङ्ख्यनरनारीसमाकुलः ॥ १ ॥

(१) इसी बीचमें कलकत्तानगर में अनगनित नरनारियों की भीडवाला देशका महासङ्घ एकत्रित हुआ ।

राजप्रतिनिधेर्यत्र वाचिता पत्रिकोच्चकैः ।
स्वराज्यमचिराद्यूयं प्राप्स्यथेति प्रसान्त्वनी ॥ २ ॥

(२) जहाँ अर्थात् उस सङ्घ में वायसरायका पत्र यह सान्त्वना देता हुआ पढा ऊंचे गया कि आप को स्वराज्य जल्दी मिलेगा ।

एकादशाब्दतः पूर्वं मान्तेगूवाक्यभङ्गतः ।
वञ्चिता आर्विणे पत्रे राष्ट्रिया न विशश्वसुः ॥ ३ ॥

(३) देशीय अर्थात् भारतीय लोगोंको ११ वर्ष पहले मान्टेग्यु के प्रतिज्ञाभङ्गरूपी वचनों द्वारा प्रतारित होने के कारण अर्विन के पत्र में विश्वास नहीं किया ।

निस्सारं वचनं तस्य विनिश्चित्य महाजनैः ।
पत्रं प्रत्यर्पितं तस्मै पुनर्वञ्चनभीरुभिः ॥ ४ ॥

(४) महाजनों, अर्थात् देशके मुख्य नेताओंने, दूसरी बार भी धोखा मिलनेसे डरकर यह निश्चय किया कि उसके वचन में कुछ तत्व (सार) नहीं है वह पत्र लौटा दिया ।

एकसंवत्सरात्पूर्वं भारतं प्राप्नुयात्पदम् ।
कानडाप्रमुखैर्देशैः सदृशं निजशासने ॥ ५ ॥

(५) एक वर्ष से पहले भारतवर्ष को कैनेडा आदि देशों के समान अपने शासन करने योग्य स्थान प्राप्त हो ।

जन्मसिद्धाधिकारं चेद्भारतीया न लम्भिताः ।
यतिष्यतेऽखिलो देशः पूर्णस्वातन्त्र्यसिद्धये ॥ ६ ॥

(६) यदि भारतीयोंको अपना जन्मसिद्ध अधिकार न प्राप्त हुआ तो समस्त देश पूर्ण स्वतन्त्रता को सिद्ध करने लिए यत्न करेगा ।

इति सन्देशमास्यं ते प्राहिण्वन्नार्विणप्रभोः ।
देहलीनगरस्थस्य राष्ट्रियाः सङ्घनायकाः ॥ ७ ॥

(७) देहली नगर में बैठे हुए कॉंग्रेस के नेताओंने अर्विन महोदय (वायसराय) को यह सन्देश भेजा ।

प्रतिज्ञा च कृता मुख्यैः स्वराज्यस्याभिकाङ्क्षिभिः ।
सज्जीकर्तुं जनान् सर्वान् धर्मयुद्धाय भाविने ॥ ८ ॥

(८) स्वराज्य के इच्छुक नेताओंने अर्थात् भविष्य में आनेवाले धर्म-युद्ध के लिए देश के लोगों को तय्यार करने की प्रतिज्ञा की ।

निखिलैवं पुरोगास्ते स्वाधिकारमभीप्सवः ।
मनोरथस्य संसिद्धिमेकाब्दं प्रत्यपालयन् ॥ ९ ॥

(९) अपने अधिकार की इच्छा रखनेवालों नेतागणोंने इस प्रकार करके एक वर्षपर्यन्त अपने मनोरथ की संसिद्धि की प्रतीक्षा की ।

चक्रगोष्ठ्यां वयं सर्वां भारतस्य परिस्थितिम् ।
निर्णेष्यामो यथायोग्यमित्याह प्रभुरार्विणः ॥ १० ॥

(१०) अर्विन प्रभु अर्थात् वायसराय ' अर्विन ' ने यह कहा कि हम भारतका समस्त परिस्थिति का निर्णय यथायोग्य ' गोलमेज ' सभा में करेंगे ।

*खवह्निग्रहचन्द्राब्दे मिलिता प्रथमेऽह्नि ।
अन्तिमं निर्णयं कर्तुं लवपुर्यां महासभा ॥ १३ ॥

(१३) अन्तिम निर्णय के लिए महासभा लाहौर शहरमें सन इस्वी १९३१ की पहली तिथिको हुई।

प्रेरयन्तो जनान् सर्वाञ्छासनानां व्यतिक्रमे ।
स्वयं च तानि भङ्क्ष्यामो नायकैरिति निश्चितम् ॥ १४ ॥

(१४) नेताओंने यह निश्चय किया कि सब नियमोंके उल्लंघन करने के लिए प्रजाको प्रेरित करते हुए हम स्वय भी उन्हें भंग करेंगे।

तथापि शान्तिवात्सल्यान्महात्मा नीतिकोविदः ।
आङ्ग्लराज्येन सन्धातुं चकारोचितलेखनम् ॥ १५ ॥

(१५) तो भी शान्तिप्रिय होने के कारण नीति में चतुर महात्माने अंग्रेजी राज्यके साथ सन्धि करनेके लिए उन्हें उचित लेख लिखा।

प्रार्थयामास पत्रेऽसौ दुष्टशासननिर्हृतिम् ।
मोचनं च स्वबन्धूनां दारिद्र्यव्याधिविप्लवात् ॥ १६ ॥

(१६) उसने अर्थात्, महात्माजीने पत्रमें बुरे शासनको हटाने और अपने देशनिवासी भाईयोंके दरिद्रता और बिमारीके झगडोंसे छुड़ानेके लिए प्रार्थना की।

---

*अत्र खवह्निग्रहचन्द्रेतिपदै सङ्ख्या गृह्यते। तद्यथा-खमाकाशमेकः वह्नयो दक्षिणाग्निगार्हपत्याहवनीयास्त्रय । ग्रहा रव्यादयो नव चन्द्रश्चैक इति । अङ्कानां वामतो गतिरिति सङ्केतमनुसृत्य त्रिंशदुत्तरनवशताधिक-सहस्रसङ्ख्या विवक्षिता भवति ।

(इस श्लोकमें ख का अर्थ आकाश है—यह एक है। अग्नि तीन हैं। ग्रह नौ हैं। चंद्र एक है। इनको अर्थात १२०१ को उलटाया जाय तो १९३१ बनता है।)

येन देशस्य सम्पत्तेः प्रजानां शिक्षणादिषु ।
सुकर्मसु भवान् कुर्याद्विनियोगं यशस्करम् ॥ ३ ॥

(३) जिससे अर्थात् सेनाविभागमें सेना पर किए गये खर्चों की कमी से आप देश की सम्पत्ति का यशोप्रद प्रयोग प्रजाकी शिक्षादि सुकर्मोंमें कर सकें।

लवणं नाम दैवेन दत्तं नृणां यथानिलः ।
अधर्म्यो लवणस्यायं करस्तस्मान्निरस्यताम् ॥ ४ ॥

(४) नमक तो भगवानने हवा के समान मनुष्योंको प्रदान किया है। नमक पर लगाया कर धर्मानुकूल नहीं है—इसलिए इसे आप हटा दीजीए।

वर्षे वर्षे भवत्येव भूकरोऽप्यधिकाधिकः ।
कुर्वाणो निर्धनाँल्लोकान् परतन्त्रांश्च कर्षकान् ॥ ५ ॥

(५) लोगोंको निर्धन बनाता हुआ और किसानोंको परतन्त्र बनाता हुआ भूमिपर लगाया हुआ कर भी प्रति वर्ष बढ़ता जा रहा है।

अपसारय दुःखानि लोकानां त्वरितं सखे ।
किं हि कार्यं प्रभुत्वेन विमुखेन प्रजाहितात् ॥ ६ ॥

(६) हे मित्र, लोगों के दुःखों को शीघ्र ही दूर करो। जो प्रभुत्व प्रजाकी भलाईसे विमुख हो उसके क्या लाभ।

लोकस्य नाशकं मद्यं फलकार्यपि शासितुः ।
अतः स्वार्थं परित्यज्य सात्त्विकीं बुद्धिमाश्रितः ॥ ७ ॥

(७) शासक के लिए लाभदायक होता हुआ भी मद्य अर्थात् शराब प्रजाके लिए नाशक है। इस लिए स्वार्थ को छोड़कर सात्त्विक बुद्धिका आश्रय लेता हुआ।

निषेन्द्धि विक्रयं तस्य स्वात्मघातुकवस्तुनः ।
स्वामिनः परमो धर्मः प्रजानां हितकारिता ॥ ८ ॥

(८) आत्मघातक वस्तु की बिक्री बन्द करो। स्वामीका परमधर्म प्रजा की भलाई करने में है।

यद्यधर्म्यं तमारोपं वदेयुः समदर्शिनः।
तदा तत्प्रकटीकर्तुं प्रजा अर्हन्ति निर्भयाः॥ १५॥

(१५) यदि समदर्शी अर्थात् पक्षपातरहित मनुष्य उस ऋण आरोपको अयुक्त समझें तो प्रजा निर्भय होकर उस पर प्रकाश डाले।

अतः कृताञ्जलिर्याचे सावधानमिमाः सखे।
चिन्तयेः समदृष्ट्या त्वं देशस्योक्ता मयापदः॥ १६॥

(१६) इसलिए हे सखे, मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ की मेरे द्वारा बताए गए देशके दुःखोंको आप सावधान होकर निष्पक्ष दृष्टिसे सोचिए।

निरङ्कुशाः प्रवर्तन्ते यस्मिन् राज्येऽधिकारिणः।
शासनं तद्वरं नष्टं प्रजाहितविवर्जितम्॥ १७॥

(१७) जिस राज्यमें अधिकारी लोग बिना रोकटोकके कार्यमें प्रवृत्त होते हैं, प्रजाकी भलाईसे रहित वह शासन नष्ट हुआ ही ठीक है।

अतः कार्यं हि राज्यस्य समग्रपरिवर्तनम्।
जनक्लेशानपाकर्तुमुपायोऽन्यो न विद्यते॥ १८॥

(१८) इसलिए राज्य में पूरा पूरा परिवर्तन आना चाहिए। लोगोंके दुःखोंको दूर करनेके लिए दूसरा कोई उपाय नहीं है।

स्वदेशस्य विमोक्षार्थं प्राणैरपि धनैरपि।
बान्धवा मे करिष्यन्ति प्रयासं प्रबलं ध्रुवम्॥ १९॥

(१९) अपने देशको स्वतन्त्र करनेके लिए मेरे भाई अर्थात् भारतवासी अवश्यमेव धनसेभी और प्रबल यत्न करेंगे।

निर्णयश्चक्रगोष्ठ्यास्तु न प्रमाणं भविष्यति।
पाशवात्मिकशक्त्योर्हि कुतो वादेन निर्णयः॥ २०॥

(२०) चक्रगोष्ठी अर्थात् गोलमेज द्वारा किया गया निर्णय प्रमाण नहीं माना जायगा। पशुशक्ति और आध्यात्मिक शक्ति का परस्पर निर्णय बात द्वारा कैसे हो सकता है।

स्वार्थैकतत्परत्वेन क्रियते यदि निर्णयः।
यद्याङ्ग्लाश्च प्रवर्तेरन् स्वव्यापारैकवृद्धये ॥ २१ ॥

(२१) अपने स्वार्थमें ही तत्पर रहकर यदि निर्णय किया जाए और यदि अंग्रेज जाति अपने व्यापार की वृद्धिमात्र में ही लगी रहकर प्रवृत्त हो।

भारतं दुर्बलत्वेऽपि सञ्चिप्यत्युचितं बलम्।
परािद्रक्षितुमात्मानं मृत्योरालिङ्गनादिव ॥ २२ ॥

(२२) मृत्यु के आलिंगन के समान अपने आपको शत्रुओंसे रक्षा करनेके लिए दुर्बल होता हुआ भी भारतवर्ष पर्याप्त शक्तिको इकट्ठा करेगा।

देशसेवाप्रवृत्तानां यूनां साहसिनां गणः।
अतिप्रसभवृत्तीनां वर्धते हि दिने दिने ॥ २३ ॥

(२३) देशसेवामें प्रवृत्त अति बलवान और साहसी युवकोंका समूह दिन प्र दिन बढ़ रहा है।

सङ्घोऽयं मूककोटीनामसमर्थोऽपि रक्षणे।
शासितुः सर्वदा मन्ये भवत्येव भयङ्करः ॥ २४ ॥

(२४) मेरे विचारमें यह करोड़ों गूंगोंका समूह अपनी रक्षामें असमर्थ होता हुआ भी शासकके लिए सदा भयंकर ही होता है।

दुर्बला ननु गण्यन्ते शान्तिमार्गावलम्बिनः।
परं सत्याग्रहादिद्धि नास्ति तीव्रतरं बलम् ॥ २५ ॥

(२५) शान्तिके मार्ग पर चलनेवाले दुर्बलही समझे जाते हैं पर आप सत्याग्रहसे बढ़कर तीव्रतर बल न समझो।

अतो भग्नदलेनैव विरोद्धं निश्चितं मया।
आङ्ग्लीयं हठात्कारं प्रतिरोत्स्यामि तेन च ॥ २६ ॥

(२६) इसीलिए मैंने इसी दलभेदी अर्थात् सत्याग्रहके दलभेदी कामसे विरोध करनेका निश्चय किया है। और अंग्रेजोंद्वारा किए गए हठ को हटाके रोकूंगा।

तदमोघबलं जानञ्छ्रद्धया च समन्वितः।
यदि स्यां विमुखः कार्ये भविष्याम्यतिनिन्दितः ॥ २७॥

(२७) उसके अर्थात् सत्याग्रहके कभी निष्फल न होनेवाले बलको समझता हुआ और श्रद्धा रखता हुआ मैं अपने कामसे मुंह मोड दूं अर्थात् न करूं तो मैं बहुत निन्दित हो जाऊँगा।

सत्याग्रहेण बद्धोऽहं भङ्क्ष्यामि नृपशासनम्।
घोषयिष्ये च सर्वत्र व्रतस्यास्याद्भुतं बलम् ॥ २८॥

(२८) सत्याग्रहसे बान्धा हुआ मैं राजाके शासनको तोडूंगा और सब स्थानोंपर इस व्रत के अद्भुत बल की घोषणा करूंगा।

शान्तिसत्त्वप्रधानोऽपि मार्गोऽयं विषमः परम्।
न सत्यस्य जयः प्रायः क्लेशाद्घोरतमादृते ॥ २९॥

(२९) शान्तिरूपी बलमें प्रधान होता हुआ भी यह मार्ग बहुत कठिण है। सत्यकी विजय प्रायः घोरतम अर्थात् अति कठिण क्लेश उठाए बिना नहीं मिलती है।

उद्घोष्यते च सद्भावो मया प्रस्तुतकर्मणः।
यतिष्ये तद्बलेनैव भेत्तुमाङ्ग्लदुराग्रहम् ॥ ३०॥

(३०) मुझे अपने प्रस्तुत कामकी सद्भावना की घोषणा करने होगी और उसीके बलसेही अंग्रेजोंका दुराग्रह तोडनेका यत्न करूंगा।

सदुपायेन तेनाहमहिंसैकावलम्बनः।
जगते दर्शयिष्यामि दुर्नयानाङ्ग्लशासितुः ॥ ३१॥

(३१) अहिंसाकाही एकमात्र सहारा लेकर उसी सदुपायसे अर्थात् सत्याग्रहसेही अंग्रेज शासकको बुरी नीतिका संसारके सामने उद्घाटन करूंगा।

एकलक्ष्योऽथ चेल्लोकश्चरेद्धिंसाविवर्जितः।
क्लेशैरार्द्रीभविष्यन्ति पाषाणहृदयान्यपि ॥ ३२॥

(३२) यदि हिंसा सहित संसार एक लक्ष्यमें रत होकर हिंसारहित आचरणको प्रयोगमें लायगा (उसके) क्लेशोंसे पत्थरके भी हृदय नरम हो जाएंगे।

अहिंसाव्रतनद्धोऽहं राजशासनमञ्जतः ।
भवन्तं निरुरत्स्यामि दुर्नयांश्च प्रकाशये ॥ ३३ ॥

(३३) अहिंसा व्रतका पालन करता हुआ मैं राजशासनको तोडनेसे आपको रोकूंगा अर्थात् आपसे लड़ूंगा। और बुरी नीति पर प्रकाश डालूंगा।

अधर्मेष्वपनीतेषु भारतस्य भविष्यति ।
आङ्गलैः सुगमो मार्गो विधातुं मित्रतां पुनः ॥ ३४ ॥

(३४) अधर्मोंके दूर हो जाने पर भारतको अंग्रेजोंके साथ फिर मित्रता करनी सुगम हो जाएगी।

वाणिज्यमेव हेतुश्चेदाङ्ग्लानां वसतेरिह ।
भारतस्य स्वतन्त्रत्वे कुतस्तेषां विरोधिता ॥ ३५ ॥

(३५) यदि अंग्रेजोंको यहां अर्थात् भारतमें व्यापार मात्रके ही लिए है तो भारतकी स्वतन्त्रतामें उन्हें क्यों आपत्ति होगी?

अतः शासनमन्याय्यं निष्कासयितुमर्हसि ।
विधातुं च सतामेकां संपदं भूरिचेतसाम् ॥ ३६ ॥

(३६) आपको इसलिए अन्यायपूर्ण शासनको हटाना योग्य होगा और बुद्धिमान सत्पुरुषोंकी एक सभाभी करनी होगी।

जात्यादिग्रहमुक्तानां जगत्कल्याणकारिणाम् ।
येनाङ्ग्लभारतीयानां मैत्री स्थाप्येत शाश्वती ॥ ३७ ॥

(३७) जात्यादि ग्रहोंसे मुक्त एवं संसारभरका कल्याण चाहने वाले भारतीय और अंग्रेजोंकी शाश्वत मित्रता स्थापित होगी।

पत्रमेतदनादृत्य यदि स्थास्यसि निर्दयः ।
अधर्मस्य फलं घोरं प्रतीक्षेथा ध्रुवं ततः ॥ ३८ ॥

(३८) यदि तु आप इस पत्रका निरादर करके निर्दय हुए ठहरे रहेंगे तो इस अधर्मके घोर फलकी आपको अवश्य इन्तजार करना होगा।

एकादशे दिने चाहं मासस्यास्य सुनिश्चितः ।
राजशासनभङ्गाय प्रस्थास्ये सानुयात्रिकः ॥ ३९ ॥

(३९) इस मासके ग्यारहवें दिन मैं अपने साथियोंके साथ राजशासनको तोड़नेके लिए प्रस्थान करूंगा यह पक्का निश्चय है ।

अधर्म्येषु विधानेषु पापिष्ठो लावणो नयः ।
तस्य भङ्गमतः पूर्वं करिष्येऽहं सहानुगैः ॥ ४० ॥

(४०) अधार्मिक नियमोंमें नमक सम्बन्धी नियम सबसे अधिक पापीयान् है । इसलिए अपने अनुयायियोंके साथ उसको सबसे पहले तोड़ूंगा ।

अन्याय्याल्लोकदृष्ट्यास्मान्नियमाद्दीनघातुकात् ।
यतिष्ये रक्षितुं दीनान् हृतजीवनसंश्रयान् ॥ ४१ ॥

(४१) दीनोंकी हत्या करनेवाले और लोगोंकी दृष्टिमें अन्याय करनेवाले इस नियमसे मैं उन दीनोंकी रक्षा के लिए यत्न करूंगा जिनके जीवनका सहारा हरा जा चुका है ।

दुष्टशासनमस्माभिः कथं सोढमियच्चिरम् ।
इति विस्मयते लोको दास्यभारनतः परम् ॥ ४२ ॥

(४२) दास्यभावसे अत्यन्त झुके अथवा दबे हुए लोग इस बात पर हैरान हैं कि हमने बुरे शासनको इतनी देरके लिए सहन कैसे किए हैं ?

सज्जोऽस्मि विफलीकर्तुमधिकारं प्रशासितुः ।
निरुद्धे मयि सन्त्यन्ये कार्यदक्षाः सहस्रशः ॥ ४३ ॥

(४३) मैं शासकके अधिकारको निष्फल करनेके लिए उद्यत हूँ । मेरे पकड़े जानेपर हजारों दुसरे कार्यकुशल जन मौजूद हैं ।

सत्याग्रहप्रशान्तात्मा देशभक्तिप्रचोदितः ।
अधुना भारते लोकः सञ्जातो दण्डनिर्भयः ॥ ४४ ॥

(४४) सत्याग्रह द्वारा प्रशान्त प्रकृतिवाली–देशभक्तिसे प्रेरित भारतकी जनता अब दण्डसे निर्भय हो गयी है ।

संवादं कर्तुकामश्चेन्मया सह सविस्तरम् ।
देहल्यां भवतः शीघ्रमागमिष्यामि सन्निधौ ॥ ४५ ॥

(४५) यदि तुम विस्तारपूर्वक मेरे साथ बात करना चाहते हो तो मैं शीघ्रही देहलीमें आपके पास आ जाऊंगा।

न तर्जनधिया पत्रं मयेदं लिखितं सखे ।
परन्तु धर्म्यभावेन दुर्विधानरुरुत्सुना ॥ ४६ ॥

(४६) हे मित्र–यह पत्र मैंने आपको धमकानेके लिए नहीं प्रत्युत दुर्विधानको धर्मभावसे रोकनेकी इच्छासे लिखा है।

इदमाङ्ग्लस्य मित्रस्य हस्तेन प्रहिणोम्यहम् ।
रेनल्डाख्यस्य दैवेन नियुक्तस्येव कर्मणि ॥ ४७ ॥

(४७) यह पत्र मैं रेनल्ड नामके एक अंग्रेज मित्रके हाथ भेज रहा हूँ। यह मित्र मानो इसी कामके लिए भगवानने नियुक्त किया गया है।

एकादशोऽध्यायः

अर्विणस्य महात्मासौ प्रत्यपालयदुत्तरम् ।
अतिक्रान्तेऽपि सप्ताहे प्रतिलेखं न चाप सः ॥ १ ॥

(१) उस महात्माने 'आर्विन' अर्थात् वायसराय के उत्तरकी प्रतीक्षाकी सप्ताह के गुजर जाने पर भी उत्तर न मिला।

यथोक्तमथ मासस्य महात्माऽह्नि निश्चिते ।
निर्जगामाश्रमात्प्रातर्धर्मयात्राचिकीर्षया ॥ २ ॥

(२) जैसे कहा था (वैसेही) निश्चित दिनपर महात्मा प्रातःकालके समय धर्मयात्रा करनेकी इच्छासे आश्रमसे निकल पड़े।

दण्डहस्तोऽल्पपाथेयी नग्नस्कन्धोऽल्पवेष्टितः ।
साष्टसप्ततिशिष्यश्च प्रतस्थे दाण्डिपल्लिकाम् ॥ ३ ॥

(३) हाथ में दण्डा उठाए–यात्राके लिए कुछ थोडासा भोजन लिए, नङ्गे कन्धेवाले, थोडे कपडे पहने, ७८ शिष्योंसे युक्त, वे दण्डी नामके गाँवकी ओर चल पडे।

सर्वे श्रद्धान्विताः शिष्या अहिंसाबलवेदिनः ।
यथोक्तकारिणश्चासन् गान्धिनैव स्वयं वृताः ॥ ४ ॥

(४) सारेही शिष्य अहिंसाके बलको समझनेवाले, श्रद्धासे युक्त, कहनेके अनुसार काम करनेवाले, अर्थात् आज्ञाकारी, गान्धीजीने स्वयंही चुने थे।

सहानुगैर्महात्मासौ भङ्क्तुं लवणशासनम् ।
दूरं सार्धशतक्रोशं प्रचचालाभि सागरम् ॥ ५ ॥

(५) वे महात्मा अपने अनुगामियोंके साथ नमकके नियमको भङ्ग करनेके लिए १५० मीलकी दूरी पर समुद्रकी ओर चल पड़े।

प्रभाते प्रस्थितं गान्धिं ग्रामीणास्तं दिदृक्षवः ।
पञ्चक्रोशायते मार्गे विस्मिताः सङ्कुलाः स्थिताः ॥ ६ ॥

(६) प्रातःकालमें चले हुए गान्धीजी को देखनेकी इच्छासे गाँवके लोग पांच कोस लम्बे रास्तेमें अर्थात् कतारें बनाकर विस्मित हुए इकट्ठे जुडकर ठहरे थे।

नाश्रमं पुनरेष्यामि यावद्देशो न मुच्यते ।
इति तस्य व्रतं ज्ञात्वा लोका वर्त्मन्यजागरुः ॥ ७ ॥

(७) जब तक देश स्वतन्त्र नहीं होता है तब तक आश्रमको नहीं लौटूंगा उनकी इस प्रतिज्ञाको जानकर लोग रास्तेमें जागने लगे।

धर्म्येयमन्तिमा यात्रा कर्तव्या सम्प्रदायतः।
अतः पद्भ्यां चरिष्यामि जगादेति शुचिव्रतः ॥ ८ ॥

(८) वे पवित्र व्रतवाले कहने लगे—कि यह यात्रा धार्मिक है इसलिए इसे सम्प्रदायानुसार अर्थात् यथोचित धार्मिक यात्रानुसार करनी चाहिए।

पांसुलेनाध्वना गच्छन् विललम्बे प्रतिस्थलम्।
उपदेष्टुं जनान् सर्वान् प्रस्तुतं कार्यगौरवम् ॥ ९ ॥

(९) लोगोंको प्रस्तुत कार्यके महत्त्वको समझानेके लिए वह (गान्धीजी) धूलि भरे रास्तेसे जाता हुआ जगह जगह पर ठहरता गया।

बान्धवा अयि वर्तध्वं सत्याग्रहनियन्त्रिताः।
विधिं क्षारस्य भङ्क्तेति ग्राम्यलोकानबोधयन् ॥ १० ॥

(१०) हे भाइयो—सत्याग्रहसे संयमित होकर व्यवहार करो। नमकको विधि अर्थात् नियमको तोड़ो। यह बात उन्होंने गाँवके लोगों को समझाई।

अधिकारपदान्यार्याः सपदि त्यक्तुमर्हथ।
इति विज्ञापितास्तेन ग्रामेशास्तानि तत्यजुः ॥ ११ ॥

(११) हे आर्यो अर्थात् भद्रलोगो! आप अपने अधिकारोंको फौरन छोड़ दो। इस प्रकारकी आज्ञा पानेपर गाँवके मुख्य लोगोंने अथवा गाँवके मालिकोंने उनका परित्याग कर दिया।

महात्मा तीरमम्भोधेर्न यावत्प्रत्यपद्यत।
तावद्देवाङ्ग्लकैङ्कर्यमजहुर्द्विशताधिकाः ॥ १२ ॥

(१२) महात्मा ज्योंही समुद्रके किनारे पहुँचे कि अंग्रेजोंके दासत्वको दो सौ से अधिकने छोड़ दिया।

उपस्थितस्ततो गान्धिश्चत्वारिंशत्तमे दिने।
दाण्डिग्रामं निरानन्दं लवणक्षेत्रसंयुतम् ॥ १३ ॥

(१३) तब गान्धी चालिसवें दिन नमकके क्षेत्रमें युक्त, आनन्द-रहित दण्डिग्रामको पहुँचे।

प्रागेव ध्वंसनं कर्तुं नियुक्तैर्ग्रामरक्षिभिः ।
उन्मूलितानि सर्वाणि क्षेत्राणि लवणस्य हि ॥ १४ ॥

(१४) पहले से ही विध्वंस के लिये नियुक्त ग्रामरक्षक लोगों ने सब नमकके क्षेत्र मूलसे नष्ट कर दिये थे।

महात्मा तत आरेभे क्षारनिष्कर्पमम्बुधेः ।
परःशतानां ग्राम्याणां समेतानां समक्षतः ॥ १५ ॥

(१५) तब महात्माने सौ से अधिक आए हुए गाँवके सामने समुद्रसे नमक निकालना शुरू किया।

गान्धिना शासने भग्ने क्षणात्तदनुयायिनः ।
क्षारन्यासमुपादाय न्यवृतञ्छिबिरं निजम् ॥ १६ ॥

(१६) गान्धीके शासन तोड़ने पर उसके अनुयायी शीघ्रही नमककी अमानत अर्थात रखे हुए नमकको लेकर अपने शिबिरको लौटे।

दण्डकाष्ठायुधोपेतास्तन्निवासमतर्कितम् ।
रक्षकास्तत आगत्य तेभ्यः सर्वमपाहरन् ॥ १७ ॥

(१७) रक्षकों अर्थात सिपाही लोगोंने दण्ड (डण्डे), लकडी और हथ्यारोंसे युक्त हो उनके घरोंमें अचानक जाकर वहाँसे सब कुछ हरलिया।

विधिभङ्गोद्यता लोकाः प्रत्यावर्तन्त सागरम् ।
कृत्वा च लवणं भूरि न्यक्षिपंस्तद् गृहे गृहे ॥ १८ ॥

(१८) नियम तोड़ने को तत्पर हुए तुले हुए लोग सागरको फिर लौट आए, बहुत सारा नमक बना बनाकर घर घरमें फेका—अर्थात दिया।

अनिरुद्धस्ततो गान्धिर्विसृज्य पुरुषान् शतम् ।
जगाम ग्राममन्यं स च्छेत्तुं लवणशासनम् ॥ १९ ॥

(१९) तब गान्धी बिना रोकटोकके सौ मनुष्योंको छोड़कर नमकको नियमको तोड़नेके लिए दूसरे गाँवमें गये।

मुम्बापुर्यां च तत्काले यथा सर्वासु दिक्षु च ।
क्षारं निष्पादितं लोकैः शासनं भङ्क्तुमिच्छुभिः ॥ २० ॥

(२०) उस समय बम्बईमें और सब स्थानोंमें (दिशाओंका अर्थ स्थान) शासनको तोड़नेकी इच्छासे लोगोंने जब नमक बनाया।

लवणस्य कृतिर्नीता हास्यतामधिकारिभिः ।
अनादृता ततश्चाङ्ग्लैरुद्धतैरात्ममानिभिः ॥ २१ ॥

(२१) तब अपने आपको बड़ा माननेवाले उद्धत अंग्रेज अफसरोंने नमकको बनाने (काम) का उपहास किया और उसका निरादार किया।

क्षारनिष्पादनेच्छायां प्रसृते वडवाग्निवत् ।
क्रोधो भयं च सञ्जाते शासितुर्मूढचेतसि ॥ २२ ॥

(२२) वड़वाग्निके समान नमक बनानेकी इच्छाके फैल जानेपर मूढ़ बुद्धिमें क्रोध और भय दोनों पैदा हो गए।

प्रस्थितो घार्सनग्रामं गान्धिरासिध्यतां द्रुतम् ।
इति प्रतिनिधेराज्ञां प्राप्नुवन् ग्रामरक्षिणः ॥ २३ ॥

(२३) घार्सन नामक ग्राममें जाते हुए गान्धीको शीघ्रही पकड़ो–गाँवके रक्षकोंको वायसरायकी यह आज्ञा मिली।

अथ रात्रौ कराडिस्थः सुखसुप्तः परिश्रमात् ।
मधुमासस्य पञ्चम्यां गान्धिराग्राहि रक्षकैः ॥ २४ ॥

(२४) तब रातके समय थकावटके कारण सुखसे सोता हुआ कराडीमें स्थित हुआ गान्धी मधुमासकी पाँचवी तारीखको सिपाहियों द्वारा पकड़ा गया।

यत्त्वया शासनं भग्नं दण्डार्हस्त्वमतो मतः ।
इति राजनिदेशं ते प्रबोध्यैनमदर्शयन् ॥ २५ ॥

(२५) शासन भंग करनेके कारण तुम दण्डके योग्य माने गए हो यह राजकी आज्ञा उन्हें जगा कर उन्हें दिखलाई।

तं रजन्यां तमोमय्यां निन्युः सपदि रक्षिणः ।
लोकविक्षोभमाशङ्क्य जवात्पुण्यपुरान्तिकम् ॥ २६ ॥

(२६) लोगोंमें क्षोभ हो जानेकी शङ्कासे सिपाही लोग जल्दीही तेजीसे उसे अन्धेरी रातमें पुण्यपुरके भीतर लिवाले गए ।

प्रतिपेदे स पुण्यात्मा रक्षितः पुण्यपत्तनम् ।
चिक्षिपे च ततो नीतो यरोडाबन्धनालये ॥ २७ ॥

(२७) रक्षित-सिपाहियों द्वारा रक्षित वह पुण्यात्मा (गान्धी) पुण्यपत्तनको पहुँचा । वहाँसे लिवा लेगया यरवादा कैदखानेमें डाल दिया गया ।

क्षणेन बन्धुभिः स्निग्धैर्गान्धिरेव वियोजितः ।
स्वैरचारिष्वनेकेषु गौराङ्गेष्वपराधिषु ॥ २८ ॥

(२८) अनेकों अपराधियों अंग्रेजोंके स्वतन्त्रतापूर्वक फिरते हुओंमें गान्धी क्षणमेंही प्रेमी बन्धुओंसे पृथक् किया गया ।

हाहाकारेऽपि सञ्जाते गान्धिबन्धनवार्तया ।
प्रशस्योऽभवदाचारो लोकानां सुनियन्त्रितः ॥ २९ ॥

(२९) गान्धीके पकडे जानेके समाचारसे हाहाकार मचजाने पर भी लोगों का आचरण सुसंयमित होकर उत्तम रहा ।

महात्मना यथादिष्टं तथा कार्यमकारि तैः ।
विदेशाम्बरमद्यादिबहिष्कारपुरस्सरम् ॥ ३० ॥

(३०) महात्माने जैसी आज्ञा दी थी वैसेही उन्होंने विदेशी कपडे तथा मद्यादिके बहिष्कारको आगे रखकर तदनुसार काम किया ।

द्वादशोऽध्यायः

तीव्रसंवेगतो यत्नः क्षारनिर्माणकर्मणि ।
मुम्बापुर्यां च सोत्साहैः सत्याग्रहिभिराश्रितः ॥ १ ॥

(१) बम्बई नगरमें उत्साहशील सत्याग्रही जनोंने नमक बनानेका यत्न बड़ी तेजीसे किया ।

सर्वात्मना निमग्नोऽभूत्कार्ये तस्मिन्नहर्निशम् ।
एकचित्तो जनः कृत्स्नो निरस्तविषयान्तरः ॥ २ ॥

(२) दूसरे २ कामोंसे हटकर सब लोक एकाग्रचित्त होकर दिनरात उसी काममें ही पूर्ण रूप से लग गए।

मिलितो जलधेस्तीरे नराणामुदधिः परः ।
अक्षोभ्यः क्लेशवात्याभिः कार्यगाम्भीर्यदुस्तरः ॥ ३ ॥

(३) मनुष्योंका महान् समुद्र अर्थात् बहुत सारे लोग क्लेशरूपी हवाके झोंकोंसे न हिलनेवाला, प्रस्तुत कार्यके गाम्भीर्यके कारण दुस्तर समुद्रके किनारे इकट्ठा हुआ।

वडालाद्धार्सनादारादवस्कन्दः कृतो जनैः ।
क्षेत्रेषु राजकीयेषु लवणस्य जिहीर्षया ॥ ४ ॥

(४) नमकके हरनेकी इच्छासे राजकीय अर्थात् सरकारी नमक क्षेत्रोंमें लोगोंने धार्सन तथा वडाला से घेरा डाल दिया।

प्रत्यहं शतशो लोका गृहीताः पुररक्षकैः ।
तथापि नरनारीणां श्रेणयः सर्वतोऽचलन् ॥ ५ ॥

(५) प्रतिदिन पुररक्षकों अर्थात् सिपाहियोंने सैंकड़ोंकी संख्यामें लोगोंको पकड़ा तोभी स्त्री-पुरुषोंकी कतारें सब ओरसे चल रही थीं।

अनुभूतं परं कष्टं कारासु बहुभिर्जनैः ।
अदृष्टपूर्वसङ्क्लेशैर्विभवोत्तरजीविभिः ॥ ६ ॥

(६) जिन लोगोंने क्लेशको नहीं देखा था, जो सम्पत्तिशील थे, ऐसे बहुतसे लोगोंने कैदमें महान् कष्ट सहारे।

क्षारन्यासप्रदेशेषु नरनारीकदम्बकम् ।
क्षाराकर्षसमुद्युक्तमतिक्रौर्येण ताडितम् ॥ ७ ॥

(७) नमक रखनेके बहुतसे स्थानोंमें नमक निकालनेके कार्यमें लगा हुआ नरनारियोंका समूह बड़ी क्रूरतासे पीट गया।

अहो पूजास्पदं तेषां श्लाघ्यमाचरणं खलु ।
कृत्स्नघातसहिष्णूनामहिंसाव्रतधारिणाम् ॥ ८ ॥

(८) अहो! सब प्रकारके आघातोंको सहनेवाले अहिंसा व्रतको धारण करनेवाले उनका आचरण निश्चयसेही पूजाके योग्य है।

दण्डप्रहारसंनिद्धैर्निर्भयैर्दृष्टपौरुषैः ।
राष्ट्रीयरुग्णगेहानि पूर्यन्ते स्म क्षतैर्जनैः ॥ ९ ॥

(९) देशके इस्पताल, दण्डोंके प्रहारसे जखमी, निर्भीक, मार खाए हुए, जिन पर बल प्रयोग किया गया है ऐसे लोगोंसे भरे जाने लगे।

मस्तके ताडिताः केचिदुरसि प्रहृताः परे ।
केचिद्भग्नास्थिकाश्चान्ये निष्कृष्टोपस्थभागकाः ॥ १० ॥

(१०) कइयोंके मस्तकों पर मारें पड़ीं, कई छातियों पर पीटे गए—कइयोंकी हड्डियाँ तोडीं गईं, कइयोंके उपस्थभाग खैंच लिए गए।

हृतवस्त्राः परे केचिद्गुदे निष्ठुरताडिताः ।
धरण्यां मूर्च्छिताः पेतुः प्रशान्ता देशसेवकाः ॥ ११ ॥

(११) और कइयोंके वस्त्र उतार लिए गए। कइयोंको गुदास्थानमें मे कठिन आघात पहुँचाए गए। अर्थात् चोटें लगाई गईं। शान्त स्वभाववाले देशसेवक पृथिवीपर मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

ततो रक्षिभिराकृष्टा भारतीयनरासुरैः ।
कण्टकावृतिषु क्षिप्ताः खातकेषु जलेऽथवा ॥ १२ ॥

(१२) तब इसके पीछे नररूपमें असुर तुल्य भारतीय सिपाहियों द्वारा खेंचे गए, (कई) काटोंमें, खाइयोंमें अथवा जलमें फेंक दिए गए।

अहो नैच्यमचिन्त्यं तद्देशबन्धुविघातिनाम् ।
मूर्च्छितानपि हिंसन्तो यदेते न व्यरंसिषुः ॥ १३ ॥

(१३) अहो! उन देशभाइयोंको मारनेवालोंकी नीचता सोचनेमें नहीं आ सकती है। क्योंकि मूर्छा पाये हुए लोगोंको मारनेसे वे न हटे।

अत्याचारस्य वृत्तान्तो रक्षिवर्गस्य धार्सने ।
प्रसिद्धिं नीयमानोऽपि शासकैरवधीरितः ॥ २० ॥

(२०) धार्सन स्थानमें सिपाहियोंका अत्याचार अर्थात सिपाहियों द्वारा किया गया अत्याचार प्रसिद्धिको पहुंचा हुआ भी शासकोंसे अवधीरित किया गया अर्थात जानते हुए भी शासकोंने उस अत्याचार की परवाह न की।

एवं बन्दीक्रियन्ते स्म लोकास्तावद्दिने दिने ।
अतिघोरमभूद्यावदाङ्ग्लराज्यं सुदुःसहम् ॥ २१ ॥

(२१) इस प्रकार प्रतिदिन लोग कैदी बनाए जा रहे थे। यहाँ तककी अंग्रेजी राज्य महा भयानक और बहुतही दुस्सह हो गया।

अहो उदारसत्त्वानामिदं युद्धं महाद्भुतम् ।
येशुगौतमकृष्णानां सत्त्वोत्कर्षेण सम्मितम् ॥ २२ ॥

(२२) अहो ! येशु बुद्धदेव तथा कृष्णादि उदार महात्माओंके सत्व-गुणयुक्त उत्कर्षसे मिलता जुलता यह युद्ध अत्यद्भुत था।

अहो सत्याग्रहस्यायं प्रभावः परमोर्जितः ।
यः पाशवबलं शत्रोर्ध्रुवं परिभविष्यति ॥ २३ ॥

(२३) अहो ! सत्याग्रहका यह बहुत ऊँचा प्रभाव है जो शत्रुके पशुतुल्य बलको शीघ्रही पराजित करेगा।

स्वराज्यैकाग्रचित्तानां मुम्बापुरनिवासिनाम् ।
प्रवृत्तिः शासनं भङ्क्तुमतिभूमिं गताञ्जसा ॥ २४ ॥

(२४) स्वराज्य (प्राप्ति) के लिए एकाग्र हृदयवाले बम्बई नगरके निवासियोंके मनकी प्रवृत्ति बहुत वेगसे शासनको तोडनेके लिए पराकाष्ठाको पहुँच गई।

निषिद्धेष्वपि सर्वत्र सभासम्मेलनादिषु ।
सर्वतः सम्मिलन्ते स्म राष्ट्रीयाः कार्यसाधकाः ॥ २५ ॥

(२५) कामको सिद्ध करनेवाले भारतीय जन सब स्थानोंपर सभा-सम्मेलनको मनाई होते हुए भी सब ओर इकट्ठे होने लगे थे।

प्रतिरोद्धुं समर्थः कः स्रवन्तीनां समागमम् ।
सिन्धुसंयोगकामानां तत्समा हि प्रजागतिः ॥ २६ ॥

(२६) सिन्धु अर्थात् समुद्रके संयोगकी इच्छा रखनेवाली नदियोंकी गतिको कौन रोक सकता है? ऐसीही प्रजाकी गति है।

व्याख्यास्यन्तः सुवक्तारो धर्मयुद्धस्य गौरवम् ।
कृता बद्धमुखाः सद्यो रुद्धा नीताश्च बन्धनम् ॥ २७ ॥

(२७) धर्मयुद्धके महत्त्वको बतानेकी इच्छा रखनेवालों सुवक्ता-जनोंके मुँह बन्द किए गए अर्थात् उन्हें बोलनेसे रोका गया-ये शीघ्रही रोके गए और कैदखानेको लिवा लिए गए।

निर्दोषाः सज्जना एते न्यायभङ्गाभिशंसिताः ।
परीक्षणार्थमाहूता न्यायागारे परेद्यवि ॥ २८ ॥

(२८) दूसरेही दिन न्यायभंग करनेके लिए निर्देश करनेवाले ये निर्दोष सज्जन परीक्षाके लिए न्यायागारमें बुला लिए गए।

गुप्तमावेदितः कृत्यं शासकैर्यच्चिकीर्षितम् ।
न्यायाध्यक्षोऽददाद्दण्डं निर्दिशन् बन्धनावधिम् ॥ २९ ॥

(२९) शासकोंको जो करना अभीष्ट था वह बात न्यायाधीशको गुप्त प्रकारसे बता दी गई थी। इसलिए कैदकी अवधि बताते हुए उसने उन्हें दण्ड दे दिया।

मण्डलं नरनारीणां व्यापृतानां स्वकर्मसु ।
निस्सारितं बलान्नित्यं निर्घृणैर्दण्डताडनैः ॥ ३० ॥

(३०) अपने कामों में व्यस्त नरनारियोंके मण्डलको सदैव निर्दयतापूर्वक दिए गए दण्डोंके ताडन द्वारा जबरदस्ती निकल दिया जाता था।

देशभक्तो निजप्राणान् मन्यते यस्तृणोपमान् ।
ताडनात्तस्य किं दुःखं बन्धनात्तस्य किं भयम् ॥ ३१ ॥

(३१) जो देशभक्त अपने प्राणोंको तृणके समान मानता है उसे मार खानेसे दुःख क्या ? कैदसे भय क्या ?

सेवकेष्वपनीतेषु प्रत्यहं च सहस्रशः ।
कृतमेवेतरैः कार्यं यथादिष्टं महात्मना ॥ ३२ ॥

(३२) प्रतिदिन हजारों, सेवकोंके हटाए जानेपर दूसरे महात्माके कथानुसार काम करते थे ।

त्यक्तविद्यालया नैके व्यापृतास्तरुणाः स्थिताः ।
न्यायवादिभिषग्वर्यास्तथा च त्यक्तवृत्तयः ॥ ३३ ॥

(३३) इस कार्यमें लगे हुए युवकों में ऐसे बहुत थे जिन्होंने विद्यालय छोड़ दिए थे । और जज तथा डाक्तरोंने अपनी नौकरियां छोड़ दीं ।

यदा यदा मृषाख्यानैर्बलाद्बद्धा हि नायकाः ।
तदा तदा स्थितो लोको गौरवाद्विरतोद्यमः ॥ ३४ ॥

(३४) जैसे रही अभियोग (जब जब) ही झुठे आख्यानोंद्वारा नेतालोग पकड़े गए वैसे रही लोग अभिमानपूर्वक अपने कारोबारसे विरत होगए ।

कार्यालयेषु सर्वेषु बद्धद्वारेषु सर्वतः ।
मुम्बापुरी निरुद्योगा भवति स्म पुनः पुनः ॥ ३५ ॥

(३५) सब कारखानोंके बन्द हो जानेसे बम्बई नगरी फिर निरुद्योग हो जाती थी ।

अथो दिनेषु गच्छत्सु योषितः सत्कुलोद्भवाः ।
आत्मानं राष्ट्रकृत्येषु सानन्दं समयोजयन् ॥ ३६ ॥

(३६) समय गुजरने पर कुलीन स्त्रियां आनंदपूर्वक अपनेको राष्ट्रके कामोंमें लगाने लग पड़ी ।

नारीणां विविधाः सङ्घा विदुषीभिर्विनिर्मिताः ।
कार्यक्रमप्रचारार्थं राष्ट्रसंसदुपाश्रयाः ॥ ३७ ॥

(३७) राष्ट्रसंसद् अर्थात् काँग्रेसपर आधारित नारियों के विविध सङ्घ कार्यक्रम के प्रचार के लिए विदुषी नारियोंने बनाए।

आसायं प्रातरारभ्य निश्चला योषितः स्थिताः ।
आपणेषु निरोद्धुं ता विदेशाम्बरविक्रयम् ॥ ३८ ॥

(३८) स्त्रियाँ सुबहसे लेकर सायंकाल तक विदेशी कपडे की बिक्री को रोकने के लिए दुकानों में निश्चल होकर खड़ी रहीं।

परदेशीयवस्त्राणि बहिष्कुरुत बान्धवाः ।
उपयोगो यतस्तेषां देशनाशस्य कारणम् ॥ ३९ ॥

(३९) हे भाइयो! परदेशीय कपड़ों का बहिष्कार कीजिए क्यों कि उनका प्रयोग देश के नाश का कारण है।

क्रीणीध्वं खद्दरं वासो दीनानामन्नदायकम् ।
इति ग्राहकलोकांस्ताः प्रार्थयन्ते स्म सेविकाः ॥ ४० ॥

(४०) सेविकाएं ग्राहक लोगों से यह प्रार्थना करने लगीं कि दीन जनों को भोजन देनेवाले खद्दर के कपड़े को खरीदिए।

तरुणीनां गणः स्थित्वा मद्यगेहस्य सन्निधौ ।
परमर्थकरं राज्ञो न्यरुणन्मद्यविक्रयम् ॥ ४१ ॥

(४१) युवतियों के समूहने शराबघर के पास खड़े होकर राजा अर्थात् अंग्रेजोंके धन बनाने के कारण शराबकी बिक्री को रोक दिया।

अहो मद्यमिदं नूनं बान्धवा आत्मघातकम् ।
निवर्तध्वमतस्तस्मात्सर्वविध्वंसकारणात् ॥ ४२ ॥

(४२) हे भाईयो! यह शराब अवश्यही आत्मघातक है। इसलिए इस सर्वविध्वंसकारी (मद्य) से आप हट जाइए।

मद्यपानपरित्यागात् क्षीयन्ते सङ्कटानि वः ।
दीनानां सकुटुम्बानामित्यूचुस्ताः सुराप्रियान् ॥ ४३ ॥

(४३) शराब पीने में आसक्ति रखनेवालोंको उन्होंने कहा कि मद्यपान के परित्याग से कुटुम्ब सहित दीनता को प्राप्त हुए आप लोगों के कष्ट दूर हो जाएगे।

अनादृतास्तरुण्यस्ता ग्राहकैः पानलम्पटैः ।
शप्ता विक्रयिकैश्चापि स्ववृत्तिमजिहासुभिः ॥ ४४ ॥

(४४) पान के लोभी ग्राहकों ने और उन वेचनेवालोंने जो अपनी आजीविका छोडना नहीं चाहते थे उन युवतियों का निरादर केया और उन की गालियां भी दी।

सर्वकष्टसहिष्णूनां स्थितानां शौण्डिकापणे ।
सेविकानां दृढो यत्नः शनैः सफलतामगात् ॥ ४५ ॥

(४५) सब कष्टोंको सहारनेवाले शरावको दुकानोंमें खड़ी हुई सेविकाकों का दृढ यत्न सफलता को प्राप्त हुआ।

अवगम्य सुरासक्ताः प्रचलद्युद्धगौरवम् ।
व्यसनाद्विमुखीभूय मद्यस्थानानि तत्यजुः ॥ ४६ ॥

(४६) शराब में आसक्त लोगोंने वर्तमान अर्थात् तत्कालीन युद्ध के गौरवको समझकर व्यसनसे मुँह फेर कर शराबघर को छोड दिया।

संवव्रुरापणान् केचिन्मद्यविक्रयजीविनः ।
इतरे स्वार्थनिष्ठास्तु हिंसकां वृत्तिमाचरन् ॥ ४७ ॥

(४७) मद्यकी विक्रीसे आजीविका कमानेवाले कई लोग दुकानोंपर गए। और कई स्वार्थी लोग कसाई की वृत्ति करने लगे।

विदेशीयानि वस्त्राणि विहाय नचिराज्जनाः ।
वसितुं खद्दरं वासः प्रारभन्त सगौरवम् ॥ ४८ ॥

(४८) श्रीमद्दी लोग विदेशी वस्त्रों पर परित्याग कर के गौरवपूर्वक खद्दरके कपडे पहरने लगे।

निर्भये जनवृन्देऽस्मिन् भीषणं तद्रथद्वयम् ।
अभिदुद्राव वेगेन ध्वंसयत्सुबहूञ्जनान् ॥ ६ ॥

(६) बहुत लोगों का नाश करता हुआ यह रथ का जोड़ा उस निर्भिक जनसमूह में ज़ोरसे दौड़ निकला।

निर्दोषा निहता नैके दारुणायां महापदि ।
निकीर्णाश्च मृतै रथ्या दग्धैरिव पतङ्गकैः ॥ ७ ॥

(७) उस भीषण तथा महान् संकट में बहुत से निर्दोष मनुष्य मारे गए। जले हुए पतङ्गोंके समान, मृत शरीरोंसे गलियाँ भरपूर हो गईं।

तत्रैकस्तुरगारूढः समायानाङ्ग्लकिङ्करः ।
मर्दितो रथयोर्मध्ये सत्वरं पञ्चतां गतः ॥ ८ ॥

(८) घोड़ेपर चढ़ा हुआ एक अंग्रेज़ी नोकर अर्थात अफसर वहाँ आता हुआ दोनों रथों के बीच में मसला गया और शीघ्र ही मृत्यु प्राप्त हो गया।

अथ वीरेष्वनेकेषु निद्धेष्वपि निपातुकैः ।
निश्चलाः सङ्कुले तस्मिन्नितरे निर्भयाः स्थिताः ॥ ९ ॥

(९) विहिंसिक जनोंद्वारा अनेकों वीरों के मारे जानेपर भी कई एक उस भीड़ में निर्भय होकर निश्चल खड़े रहे।

दृष्ट्वा स्वबान्धवान् विद्धान् वृद्धा काचिदुपासरत् ।
हता च गुलिकावृष्ट्या परैः संयोजिता मृतैः ॥ १० ॥

(१०) अपने भाईयों को जख्मी हुआ देखकर कोई बूढ़ी वहाँ आपहुँची। वह गोलियों से मारी गई और दूसरे पक्षवालों ने उसे मरे हुए लोगों में मिला दिया।

त्रयोदशोऽध्यायः

अथो दिनेषु गच्छत्सु लोकक्षोभ उपस्थितः ।
पुरे पेशावरे चापि चौरीचौरानुबोधकः ॥ १ ॥

(१) समय गुजरने पर पेशावर शहरमें 'चौरी चौरा' की घटना को याद दिलानेवाला अर्थात् उस जैसा लोकक्षोभ हो गया।

निरुद्धा नायका यावद्वत्सलाः कारणादृते ।
क्षुभिता जनता तावत्संयतापि व्रतेन सा ॥ २ ॥

(२) जब जनता के प्यारे नेतागण बिना कारण कैद कर लिए गए तो सत्याग्रह के व्रत से नियन्त्रित होती हुई भी वह जनता क्षुब्ध होगई।

गृहीतान् रक्षकैर्नेतॄन् देशभक्त्यैव दोषिणः ।
तज्जयं घोषयन्नुच्चैर्जनौघोऽनुससार तान् ॥ ३ ॥

(३) देशभक्ति ही के कारण दोषी ठहराए गए नेताओं के सिपाहियों द्वारा पकड़े जाने पर लोगों का समूह ऊँची आवाजसे उनको जय-जयकार के नारे लगाता हुआ उनके पीछे चल पड़े।

जनकोलाहलत्रस्तैरथ विप्लवशङ्किभिः ।
रक्षिभिः प्रार्थि साहाय्यमाङ्ग्लसैन्यस्य सत्वरम् ॥ ४ ॥

(४) विप्लव की आशका करते हुए लोगों के कोलाहल से भयभीत सिपाहियों ने शीघ्रही अंग्रेजी सेना की सहायता के लिए प्रार्थना की।

अभ्यापतत् क्षणादेव तज्जनौघे रथद्वयम् ।
अग्न्यस्त्रगुलिकापूर्णं लोकविध्वंसनोद्यतम् ॥ ५ ॥

(५) शीघ्र ही लोगों के नाश के लिए उद्यत बन्दूकों तथा गोलियों से भरे हुए दो रथ उस जनसमूह में आ पहुँचे।

निर्भये जनवृन्देऽस्मिन् भीषणं तद्रथद्वयम् ।
अभिदुद्राव वेगेन ध्वंसयत्सुबहूञ्जनान् ॥ ६ ॥

(६) बहुत लोगों का नाश करता हुआ वह रथ का जोड़ा उस निर्भिक जनसमूह में ज़ोरसे दौड़ निकला ।

निर्दोषा निहता नैके दारुणायां महापदि ।
विकीर्णाश्च मृतैं रथ्या दग्धैरिव पतङ्गकैः ॥ ७ ॥

(७) उस भीषण तथा महान् संकट में बहुत से निर्दोष मनुष्य मारे गए । जले हुए पतङ्गोंके समान, मृत शरीरोंसे गलियाँ भरपूर हो गईं ।

तत्रैकस्तुरगारूढः समायानाङ्ग्लकिङ्करः ।
मर्दितो रथयोर्मध्ये सत्वरं पञ्चतां गतः ॥ ८ ॥

(८) घोड़ेपर चढा हुआ एक अंग्रेजी नोकर अर्थात् अफसर वहाँ आता हुआ दोनों रथों के बीच में मसला गया और शीघ्र ही मृत्यु प्राप्त हो गया ।

अथ वीरेष्वनेकेषु विद्रुष्वापि विघातुकैः ।
निश्चलाः सङ्कुले तस्मिन्नितरे निर्भयाः स्थिताः ॥ ९ ॥

(९) विहिंसिक जनोंद्वारा अनेकों वीरों के मारे जानेपर भी कई एक उस भीड में निर्भय होकर निश्चल खड़े रहे ।

दृष्ट्वा स्वबान्धवान् विद्वान् वृद्धा काचिदुपासरत् ।
हता च गुलिकावृष्टया परैः संयोजिता मृतैः ॥ १० ॥

(१०) अपने भाईयों को जख्मी हुआ देखकर कोई बूढ़ी वहाँ आपहुँची । वह गोलियों से मारी गई और दूसरे पक्षवालों ने उसे मरे हुए लोगों में मिला दिया ।

सार्भको जरठः कश्चित्कम्पितो घोरदर्शनात् ।
दृष्ट्वा मृतस्थितान्भूमौ भीतः प्राचलदग्रतः ॥ ११ ॥

(११) बच्चे को उठाए एक बूढ़ा भयंकर दृश्य को देखकर कांप उठा, जमीनपर मरे हुओं के देखकर डरा हुआ आगे चल दिया।

बालं रक्षितुकामोऽपि कर्तव्यमविदन् बत ।
प्राविशत्तुमुले तस्मिन् भ्रान्तचित्त इवानले ॥ १२ ॥

(१२) बच्चे को बचानेकी इच्छा रखता हुआ भी वह क्या करना चाहिये सो न समझकर कोई भ्रान्तचित्त जिस तरह अग्नि में जा गिरे उसी तरह उस संग्राम में घुस गया।

कुरुध्वं गुलिकाक्षेपं मयीति करुणं ब्रुवन् ।
नृशंसैस्तद्वचः श्रुत्वा सार्भको हत एव सः ॥ १३ ॥

(१३) 'मेरे ऊपर गोलियाँ फेंको' वह करुण स्वर में बोला। निर्दय लोगों ने उसका वचन सुनकर बच्चेसहित उसे मार ही दिया।

शकटेषु शवान् सर्वान् राशीकृत्य दुरात्मकाः ।
अनावेद्यैव बन्धुभ्यः काष्ठवच्चिक्षिपुर्जले ॥ १४ ॥

(१४) दुरात्माओंने सब मृत शरीरों को रथों में इकट्ठा करके उनके रिश्तदारों को बिना बताए ही उन्हें लकड़ी के समान पानीमें फेंक दिया।

ततो यावत्स विक्षोभो वर्धते स्म जने पुनः ।
तावदाज्ञापिताः क्षेप्तुमाग्नेयास्त्रं घरीवलाः ॥ १५ ॥

(१५) जब लोगोंमें फिर से हलचल बहुत बढ गई तो घरीवाल सिपाहियों को तोपें चलाने की आज्ञा दी गई।

आज्ञा सेनापतेर्घोरा सैनिकैस्तैरनादृता ।
परिणामं तृणीकृत्य स्वप्रवृत्तेः सुदारुणम् ॥ १६ ॥

(१६) अपनी प्रवृत्ति के भयंकर परिणाम को तृणसमान तुच्छ गिनकर उन सिपाहियों ने सेनापति की घोर आज्ञा की परवाह न की।

रक्षणार्थं स्वदेशस्य वयं सैन्ये नियोजिताः।
उपद्रवादमित्राणां न तु हन्तुं स्वबान्धवान् ॥ १७ ॥
(१७) हम शत्रुओं के संकटसे अपने देशकी रक्षा करने के लिए सेनामें भरती किए गए थे न कि अपने भाइयों को मारने के लिए।

सम्पातं न करिष्यामो निःशस्त्रेषु स्वबन्धुषु।
हन्येमहि वधार्हाश्चेदित्यवोचन् धरीवराः ॥ १८ ॥
(१८) धरीवालों ने कहा कि यदि हम मारने योग्य हैं तो हमें मार दीजिए। हम निरास्त्र भाइयोंपर गोलियाँ नहीं चलाएंगे।

निजाज्ञोल्लङ्घनक्रुद्धस्तत्क्षणात्स चमूपतिः।
सैनिकानामनेकेषां वधदण्डं समादिशत् ॥ १९ ॥
(१९) इसी क्षण अपनी आज्ञा के उल्लंघनसे क्रुद्ध हुआ उस सेनापतिने अनेक सिपाहियों को मृत्युदण्डकी आज्ञा दी।

एकस्तु तेषु वीरेषु यावज्जीवं प्रवासितः।
सैनिका अवशिष्टाश्च कृताः कारानिवासिनः ॥ २० ॥
(२०) इनमें से एक वीर को आजीवन परदेशनिवास मिला। शेष सिपाही बन्दीघर किए गए।

सज्जनाः खलु ते धन्यास्त्यक्तस्वातन्त्र्यजीविताः।
परिहर्तुं स्वबन्धूनां वधं देशप्रयासिनाम् ॥ २१ ॥
(२१) अपने देश के लिए प्रयत्नशील हत्या रोकने के लिए भाइयों को स्वेच्छापूर्वक अपने जीवन और स्वातंत्र्य का परित्याग करनेवाले वे सज्जन धन्य हैं।

राष्ट्रीयाणां वशे न्यस्य लोकानाङ्ग्ला गताः पुरात्।
अचिरात्तु न्यवर्तन्त सविमानाः ससैनिकाः ॥ २२ ॥
(२२) लोगों को देशीय अर्थात् भारतीय लोगों के हवाले कर अंग्रेज शहरसे निकल गए, पर शीघ्रही सिपाहियों और हवाई जहाजों के साथ लौट आए।

पुण्याचारेऽभ्युपेतेऽपि येशुक्रिस्तानुयायिभिः ।
कथं नु शासकैरित्थं परं दौरात्म्यमाश्रितम् ॥ २९ ॥

(२९) ईसामसीह के अनुयायी शासक वर्गने पुण्याचरण का स्वीकार करने पर इस प्रकार निर्दयता का व्यवहार क्यों किया ?

क्रैस्तवेदेन किं कार्यं दशाज्ञाभिश्च किं फलम् ।
को वाऽर्थश्चरितैः पुण्यैर्येशुक्रिस्तमहात्मनः ॥ ३० ॥

(३०) ईसाई वेद का क्या लाभ है ? दश आज्ञाओं का क्या फल है ? महात्मा ईसामसीह के पुण्यस्वरूप चरित्रों से क्या अभिप्राय है ?

किं वा धर्मोपदेशेन प्रार्थनामन्दिरेण वा ।
किं च पातेन जानुभ्यां किं वा ध्याननिमीलनैः ॥ ३१ ॥

(३१) धर्मोपदेश से क्या ? प्रार्थना मन्दिर से क्या ? घुटनों के बल गिरने से क्या ? ध्यान से नेत्र बंद करने से क्या ?

किं दृष्टान्तैरुदारैस्तैः किं येशोः कीर्तितैर्गुणैः ।
सत्यदानदयाधर्मक्षमाधृतिमुखैरपि ॥ ३२ ॥

(३२) उन उदार दृष्टान्तो से क्या ? सत्य-दान-दया धर्म-क्षमा धैर्य आदि इसाके गुणोंके गानसे क्या ?

ईश्वरस्य वयं पुत्रा इति नित्याभिमानिनः ।
कथं कापटिका एते विशेयुर्येशुमन्दिरम् ॥ ३३ ॥

(३३) हम भगवानके पुत्र हैं—सदैव इस बात पर गर्व करनेवाले, कपटाचरणवाले ये लोग कैसे ईसा के मन्दिर में पहुँचेंगे ?

क्रैस्तधर्मप्रसारार्थमायान्तीहोपदेशकाः ।
आङ्गला भारतं वर्षमिति किं न विडम्बना ॥ ३४ ॥

(३४) अंग्रेज उपदेशक यहाँ ईसाई धर्म के प्रचार के लिए आते हैं, यह क्या विडम्बना नहीं है ?

निषिद्धेऽपि हठादाङ्ग्लैर्निष्क्रमे नगराद्बहिः ।
कृतमुल्लङ्घनं कैश्चित्ततो रुद्धाश्च नायकाः ॥ २३ ॥

(२३) अंग्रेजों द्वारा नगर के बाहर जाने से निषिद्ध होने पर भी कई लोगों ने उनका हठपूर्वक उल्लंघन किया । फिर नेताओं को पकड़ा गया।

प्रस्थिता लोकयात्राथ स्वानुकम्पाप्रदर्शिनी ।
पेशावरस्य रथ्यासु जयघोषं वितन्वती ॥ २४ ॥

(२४) अपनी सहानुभूतिका प्रदर्शन करती हुई पेशावर की गलियों में जयघोष के नारे लगाते हुए लोगों के जलूस निकल पड़े ।

आरब्धो गुलिकाक्षेपो जनौघे सैनिकैः पुनः ।
जनाः सप्त न्यहन्यन्त बहवश्च परिक्षताः ॥ २५ ॥

(२५) सिपाहियों ने उस जनसमूह में फिर गोलियाँ फेंकना शुरू किया । सात आदमी मारे गए और बहुतसे जख्मी हो गए ।

इति पेशावरस्याभूत्संहारोऽतिभयावहः ।
प्रलयान्तेऽप्यविस्मार्यो महाक्लेशार्दितैर्जनैः ॥ २६ ॥

(२६) इस प्रकार पेशावर नगर का संहार ऐसा भयंकर हुआ जो महाक्लेश से पीडित लोगों को प्रलय के अन्ततक भी न भूलनेवाला था ।

किमुत्तरं प्रदास्यन्ते शासका दुष्टबुद्धयः ।
स्वकर्मणां परे लोके येशुक्रिस्तानुवर्तिनः ॥ २७ ॥

(२७) ईसमसीह के पीछे चलनेवाले दुष्टबुद्धि शासक परलोक में अपने कर्मोंका क्या उत्तर देंगे ?

किं धर्मेण प्रभोर्येशोस्त्यक्तासोः प्राणिनां कृते ।
तदौदार्यविरुद्धं चेद्वर्तेरन्ननुयायिनः ॥ २८ ॥

(२८) प्राणियों के लिए प्राणत्याग करनेवाले ईसा के धर्म से क्या लाभ है यदि उसके अनुयायी जन उसकी उदारता के विरुद्ध आचरण करें ?

पुण्याचारेऽभ्युपेतेऽपि येशुक्रिस्तानुयायिभिः ।
कथं नु शासकैरित्थं परं दौरात्म्यमाश्रितम् ॥ २९ ॥

(२९) इसामसीह के अनुयायी शासक वर्गने पुण्याचरण का स्वीकार करने पर इस प्रकार निर्दयता का व्यवहार क्यों किया ?

क्रैस्तवेदेन किं कार्यं दशाज्ञाभिश्च किं फलम् ।
को वाऽर्थश्चरितैः पुण्यैर्येशुक्रिस्तमहात्मनः ॥ ३० ॥

(३०) ईसाई वेद का क्या लाभ है ? दश आज्ञाओं का क्या फल है ? महात्मा ईसामसीह के पुण्यस्वरूप चरित्रों से क्या अभिप्राय है ?

किं वा धर्मोपदेशेन प्रार्थनामन्दिरेण वा ।
किं च पातेन जानुभ्यां किं वा ध्याननिमीलनैः ॥ ३१ ॥

(३१) धर्मोपदेश से क्या ? प्रार्थना मन्दिर से क्या ? घुटनों के बल गिरने से क्या ? ध्यान से नेत्र बंद करने से क्या ?

किं दृष्टान्तैरुदारैस्तैः किं येशोः कीर्तितैर्गुणैः ।
सत्यदानदयाधर्मक्षमाधृतिमुखैरपि ॥ ३२ ॥

(३२) उन उदार दृष्टान्तों से क्या ? सत्य-दान-दया-धर्म-क्षमा-धैर्य आदि इसाके गुणोंके गानसे क्या ?

ईश्वरस्य वयं पुत्रा इति नित्याभिमानिनः ।
कथं कापटिका एते विशेयुर्येशुमन्दिरम् ॥ ३३ ॥

(३३) हम भगवानके पुत्र हैं—सदैव इस बात पर गर्व करनेवाले, कपटाचरणवाले ये लोग कैसे ईसा के मन्दिर में पहुँचेंगे ?

क्रैस्तधर्मप्रसारार्थमायान्तीहोपदेशकाः ।
आङ्गला भारतं वर्षमिति किं न विडम्बना ॥ ३४ ॥

(३४) अंग्रेज उपदेशक यहाँ ईसाई धर्म के प्रचार के लिए आते हैं, यह क्या विडम्बना नहीं है ?

येशुना बोधितो धर्मो भारते न हि नूतनः ।
स ह्यनादिः समुद्घुष्टो वेदशास्त्रैः सनातनैः ॥ ४१ ॥

(४१) ईसामसीह का बताया हुआ धर्म भारत के लिए कोई नई चीज़ नहीं है । पुरातनकालीन वेदों तथा शास्त्रों ने उसे अनादि कहकर पुकारा है ।

येशोः पूर्वमसौ जातः सिद्धार्थो नाम भास्करः ।
अज्ञानतिमिरं हर्तुं जगतो निजतेजसा ॥ ४२ ॥

(४२) अपने तेज से संसार के अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर करने के लिए वह सिद्धार्थनामका सूर्य ईसा से पहले उत्पन्न हुआ था ।

किं चित्रं भारतीयाश्चेदाचरेयुः सुसंयताः ।
धर्मनिष्ठां यथातत्त्वं सत्याग्रहनियोधने ॥ ४३ ॥

(४३) यदि भारतीय लोग सुसंयत होकर सत्याग्रहरूपी युद्ध में यथावत् धर्मनिष्ठा का आचरण करें तो उसमें क्या हैरानी है ?

वरं स्वार्थपरा आङ्ग्लाः शिक्षेरन् यदि भारतात् ।
सहिष्णुत्वमनौपम्यं पाश्चात्त्येषु यदश्रुतम् ॥ ४४ ॥

(४४) यदि स्वार्थी अंग्रेज ऐसी अनुपम सहिष्णुता भारतीय जनों से (भारतवर्ष से) जो पहले कभी पाश्चात्यों से नहीं सुनी गई सीखें, तो अच्छा हो ।

जगतः शिक्षणायेदं कल्पते युद्धमद्भुतम् ।
यदस्यामोघतत्त्वानि न्यदर्शिषत कार्यतः ॥ ४५ ॥

(४५) संसार के सिखाने के लिए इस अद्भुत युद्ध की कल्पना की गई है जो इसके अमोघ तत्त्वों को कार्यद्वारा ही बताएगी ।

किं पुनः शिक्षयेयुस्ते येशुधर्मस्य बोधकाः।
सौम्यवृत्तीञ्जनानत्र हिन्दुधर्मानुसारिणः ॥ ३५ ॥

(३५) सौम्य स्वभाववाले हिन्दु धर्म पर चलनेवालों को ईसा के पढानेवाले फिर क्या सिखाएंगे ?

वरं यदि यतेरंस्ते परिवर्तयितुं स्वकान्।
रोगिणामनिवार्या हि चिकित्सा न स्वरोगिणाम् ॥ ३६ ॥

(३६) अच्छा तो यह हो कि ये लोग अपनेही लोगों का परिवर्तन करें। रोगग्रस्त लोगों की ही चिकित्सा अनिवार्य है न कि तन्दुरुस्तों (स्वस्थों) की।

लोभः परधनस्यापि व्याधिरित्येव गण्यते।
अनेन व्याधिना ग्रस्ताः पाश्चात्त्या वृद्धिलालसाः ॥ ३७ ॥

(३७) दूसरोंके धन का लोभ भी बिमारी ही समझी जाती है। अपनी वृद्धी की लालसा में आए हुए पाश्चात्य लोग इसी बिमारी में ग्रस्त है।

व्याधेरस्माद्धि जायन्ते व्याधयोऽन्ये महोल्बणाः।
ते पुनः क्रमशो नाशमुपनेष्यन्ति रोगिणः ॥ ३८ ॥

(३८) इसी रोगसे ही अन्य महाताप देनेवाली बिमारियाँ पैदा होती हैं। फिर वे क्रमशः रोगी का ही नाश ले आती हैं।

स्वदेशे सुखहीनस्सन् विदेशं स्वीकरोति यः।
न तेन फलमेष्टव्यं देशयोरुभयोरपि ॥ ३९ ॥

(३९) अपने देश में सुख न पाकर जो विदेश को स्वीकार करता है वह दोनों देशों से फल की इच्छा नहीं रख सकता।

भारते नानुरक्ताश्चेच्छासकाः पक्षपातिनः।
तेषामवस्थितेरत्र हेतुः स्वार्थैकनिष्ठता ॥ ४० ॥

(४०) पक्षपाती अर्थात् अपने देश में पक्षपात रखनेवाले शासक यदि भारतवर्ष में अनुरक्त नहीं है तो उनके यहाँ इस देश में रहने का कारण केवल स्वार्थनिष्ठा ही है।

येशुना चोदितो धर्मो भारते न हि नूतनः ।
स ह्यनादिः समुद्घुष्टो वेदशास्त्रैः सनातनैः ॥ ४१ ॥

(४१) ईसामसीह का बताया हुआ धर्म भारत के लिए कोई नई चीज़ नहीं है। पुरातनकालीन वेदों तथा शास्त्रों ने उसे अनादि कहकर पुकारा है।

येशोः पूर्वमसौ जातः सिद्धार्थो नाम भास्करः ।
अज्ञानतिमिरं हर्तुं जगतो निजतेजसा ॥ ४२ ॥

(४२) अपने तेज से संसार के अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर करने के लिए वह सिद्धार्थनामका सूर्य ईसा से पहले उत्पन्न हुआ था।

किं चित्रं भारतीयाश्चेदाचरेयुः सुसंयताः ।
धर्मनिष्ठां यथातत्त्वं सत्याग्रहनियोधने ॥ ४३ ॥

(४३) यदि भारतीय लोग सुसंयत होकर सत्याग्रहरूपी युद्ध में यथावत् धर्मनिष्ठा का आचरण करें तो उसमें क्या हैरानी है?

वरं स्वार्थपरा आङ्ग्लाः शिक्षेरन् यदि भारतात् ।
सहिष्णुत्वमनौपम्यं पाश्चात्त्येषु यदश्रुतम् ॥ ४४ ॥

(४४) यदि स्वार्थी अंग्रेज ऐसी अनुपम सहिष्णुता भारतीय जनों से (भारतवर्ष से) जो पहले कभी पाश्चात्यों से नहीं सुनी गई सीखें, तो अच्छा हो।

जगतः शिक्षणायेदं कल्पते युद्धमद्भुतम् ।
यदस्यामोघतत्त्वानि न्यदर्शिषत कार्यतः ॥ ४५ ॥

(४५) संसार के सिखाने के लिए इस अद्भुत युद्ध की कल्पना की गई है जो इसके अमोघ तत्त्वों को कार्यद्वारा ही बताएगी।

चतुर्दशोऽध्यायः

अल्पमात्रे गते काले सञ्जातं घोरसङ्कटम् ।
सोलापुरे प्रभुत्वस्य लाञ्छनं शासितुः परम् ॥ १ ॥

(१) थोड़े समयके अनन्तर अर्थात् कुछ काल बीतनेपर शोलापूर शहरमें शासक के प्रभुत्वपर बड़े कलंक के समान एक घोर सङ्कट पैदा हो गया।

मद्यपानं निराकर्तुं राष्ट्रीयैः कार्यनिष्ठितैः ।
तालीद्रुमेषु कृत्तेषु कुप्यन्ति स्माधिकारिणः ॥ २ ॥

(२) मद्यपान को हटाने के लिए कार्यक्रम में तत्पर भारतीय जनों के ताड़वृक्षों के कटानेपर अधिकारी जन क्रोध में आगए।

आज्ञानुवर्तिभिस्तेषामारब्धं राजपूरुषैः ।
प्रहर्तुं निर्घृणं काष्ठैः खर्जूरीतरुघातिनः ॥ ३ ॥

(३) उन खजूर के वृक्षों को तोडनेवालों को आज्ञाकारी राजपुरुषों ने निर्दयतापूर्वक डण्डों से मारना शुरू किया।

विक्षोभितैर्जनैर्यात्रा प्रस्तुता महती पुनः ।
शासितुर्दुष्कृतं घोरं प्रतिषेद्धुं समन्ततः ॥ ४ ॥

(४) शासकद्वारा किए गये घोर दुराचरणों को आसपास में रोकने के लिए विक्षुब्ध लोगों ने महान यात्रा की।

हतोऽस्मिन् लोकविक्षोभे रक्षी दैवेन कश्चन ।
राजहर्म्याण्यदह्यन्त केनापि तुमुले तथा ॥ ५ ॥

(५) लोगोंके उस हलचल में प्रारब्धवश एक सिपाही किसी प्रकारसे मारा गया। किसी ने उस तुमुल युद्ध में सरकारी इमारतों को जला दिया।

निषिद्धे तद्वचारोपे जनौघेष्वधिकारिभिः ।
रक्षार्थं तैः समाहूतमाङ्ग्लसैन्यं पुरान्तरात् ॥ ६ ॥

(६) अधिकारियोंने उस वचका आरोप जनसमूह पर कर देने पर पुरके भीतर से रक्षा के लिए अंग्रेजी सेना बुलाली।

लब्धपूर्णाधिकारैश्च सैनिकैः स्वैरवृत्तिभिः ।
अत्याचाराः कृता घोरा इतिहासेषु दुर्लभाः ॥ ७ ॥

(७) स्वेच्छाचारी सैनिकों ने पूर्णाधिकार प्राप्त कर लेने पर ऐसे घोर अत्याचार किए जो इतिहास में दुर्लभ हैं।

स्वेच्छया गुलिकाक्षेपस्तैः कृतोऽनपराधिषु ।
जनस्यापहृतं वित्तं धर्षिताश्च कुलाङ्गनाः ॥ ८ ॥

(८) निर्दोष जनतापर उन्होंने स्वेच्छापूर्वक गोलियाँ चलाईं। लोगों का धन हर लिया। और ऊँचे कुलों की स्त्रियोंपर बलात्कार किए।

बलात्कारपरिक्षुब्धैस्तथ दुर्नयपीडितैः ।
प्रतिरुद्धो जनैर्मार्गे राजभृत्यवहो रथः ॥ ९ ॥

(९) बुरी नीति से पीडित—बलात्कारों से क्षुब्ध—लोगों ने राजकर्मचारियों की ढोनेवाला रथ रास्तेमें रोक लिया।

जनौघरथयोर्मध्ये तदा स्तम्भ इव स्थितः ।
धनश्रेष्ठीति विख्यातो नायको लोकमानितः ॥ १० ॥

(१०) लोगों के समूह और रथ के दरम्यान धनश्रेष्ठी इस नाम से विख्यात, लोगों में पूज्य, एक नायक स्तम्भ के समान खड़ा हो गया।

संवदेयं जनैर्यावत्सान्त्वयेयं च कोपितान् ।
निर्गम्यतां द्रुतं तावदित्याङ्ग्लान् स उपादिशत् ॥ ११ ॥

(११) जब तक मैं क्रुद्ध हुए लोगों को सान्त्वना देता हूँ और इनसे बात करता हूँ आप जल्दीसे निकल जाईए।

विक्षोभितो जनौघश्च श्रेष्ठिना सान्त्वितः शनैः ।
साहाय्येन वयस्यानां त्रयाणां सहचारिणाम् ॥ १२ ॥

(१२) अपने तीन मित्रों की सहायता से सेठ ने शनैः २ जनसमूह शान्त किया।

सान्त्वयित्वा जनस्तोमं रक्षितेष्वधिकारिषु ।
कृतघ्नैः सवयस्योऽयं राजकीयैरदूष्यत ॥ १३ ॥

(१३) जनसमूह को शांत करके अधिकारियों की रक्षा करने पर भी कृतघ्न राजकर्मचारियों ने मित्रोंसहित इसे दोषी ठहराया।

रक्षकस्य निहन्तारश्चत्वारोऽमी जना इति ।
मिथ्याभिशंसनाक्षिप्ता निरुद्धास्तेऽधिकारिभिः ॥ १४ ॥

(१४) 'रक्षकोंकी हत्या करनेवाले यही चार मनुष्य हैं'। इसी प्रकार के झूटे कलंकों से अभिक्षिप्त करके उन चारों को अधिकारियों ने रोक लिया।

एवं तेष्वभियुक्तेषु लोकमान्येषु नेतृषु ।
सञ्जातो भारते वर्षे हाहाकारो यतस्ततः ॥ १५ ॥

(१५) संसार में माननीय उन लोकनायकों के अभियुक्त बनाए जाने पर भारतवर्ष में हर जगह (जहाँ कहीं) हाहाकार हो गया।

धर्मशास्त्रेण किं कार्यं किं न्यायेन प्रयोजनम् ।
क्रियते कुप्रयोगश्चेत्प्रभुत्वस्याधिकारिभिः ॥ १६ ॥

(१६) यदि अधिकारीवर्ग धर्मशास्त्र तथा न्यायका कुप्रयोग करते हैं तो फिर उन दोनों से क्या लाभ है ?

का प्रतिष्ठा हि धर्मस्य निर्दोषा यदि दूषिताः ।
न्यायाध्यक्षैश्च किं तैर्वा ये चरेयुरधर्मतः ॥ १७ ॥

(१७) यदि निर्दोष मनुष्यों पर दोष लगाए जाएं तो धर्म का क्या स्थिति हुई ? उन न्यायाध्यक्षों का क्या फायदा है जो अधर्मपूर्वक आचरण करें।

निरागसोऽपि चत्वारः स्थापिता अपराधिनः ।
तत्पुर्यां दण्डपालेन प्रत्यैक्षन्तान्त्यनिर्णयम् ॥ १८ ॥

(१८) चारों मनुष्यों के निरपराधी होते हुए भी वे चारों अपराधी ठहराए गए। उस नगर के दण्डपाल ने अन्तिम निर्णय की प्रतीक्षा की।

चतुर्षु दह्यमानेषु प्राणसंशयवह्निना ।
अदोषास्ते विमुच्यन्तामिति लोका ययाचिरे ॥ १९ ॥

(१९) जब वे चारों प्राणों के संशयरूपी अग्नि से जल रहे थे तो लोगोंने इन्हें निर्दोष बताकर इनके छुड़ाए जानेके लिए प्रार्थना की।

तथाप्यनादृता तेषां बन्धमुक्त्यभिकाङ्क्षिणाम् ।
प्रजात्रासोद्यतैर्याच्ञा दुष्टराज्याधिकारिभिः ॥ २० ॥

(२०) तो भी प्रजाको त्रास देनेमें तत्पर दुष्ट राज्याधिकारियोंने भाईयों के कैद से छुड़ाने की इच्छा रखनेवालों की यह याचा अस्वीकार कर दी।

अथ मासेषु गच्छत्सु चत्वारो दैवविप्लुताः ।
मुम्बापुरीमनीयन्त विचारायान्तिमाय ते ॥ २१ ॥

(२१) फिर कई महीनों के बाद वे चारों प्रारब्ध के अभागे आहत अन्तिम विचार के लिए बम्बई नगर को लिवा लिए गए।

आसीद्धर्मसभा युक्ता चतुर्भिर्न्यायदर्शिभिः ।
तेषामाङ्ग्लास्त्रयश्चान्यो गोविन्दाख्यः स्वदेशजः ॥ २२ ॥

(२२) चार न्यायदर्शियों से धर्मसभा युक्त हुई। इनमेंसे तीन अंग्रेज थे और चौथा गोविंद नाम का अपने देश का आदमी था अर्थात् भारतीय था।

इमे त्रयोऽपि निर्दोषाश्चतुर्थे स्वल्पसंशयः ।
इति निर्णय आचख्ये गोविन्देन हि तत्त्वतः ॥ २३ ॥

(२३) गोविन्दने ठीक २ यह निर्णय बताया कि इनमेंसे तीन तो निर्दोष हैं पर चौथेमें कुछ सन्देह है।

देशीयप्राड्विवाकस्य निर्णयस्समदर्शिनः।
तत्सहायैरवज्ञातो मोक्तुमेताननिच्छुभिः ॥ २४ ॥

(२४) इन को कैद से छोड़ने की इच्छा न रखनेवालों उन सहायकों ने उस भारतीय पक्षपातरहित भारतीय जज के पहिले निर्णय की उपेक्षा की।

न्यायाध्यक्षोऽथ गोविन्दः करालप्रतिनिर्णयात्।
नाशक्नोद्रक्षितुं साधून् देशबन्धूननागसः ॥ २५ ॥

(२५) अब वह गोविन्द न्यायाध्यक्ष अपने निरपराधी चरित्रवाले देशबन्धुओंको कठोर प्रतिनिर्णय से न बचा सका।

अपराधिन इत्याङ्ग्लैर्निश्चिते न्यायदर्शिभिः।
वधदण्डः समादिष्टश्चतुर्णामपि बन्दिनाम् ॥ २६ ॥

(२६) अंग्रेजी जजोंद्वारा इनके अपराधी ठहराए जानेपर इन चारों बन्दियों को लिए उन्हों ने वधदण्ड की आज्ञा दी।

का नाम गणना प्राणैर्देश्यानां परशासितुः।
वरं हि तस्य ते नष्टा न जीवन्तो विरोधिनः ॥ २७ ॥

(२७) परदेशीय अर्थात् अंग्रेज शासकों की दृष्टि में भारतीयों के प्राणोंका क्या गिनती है? उसके लिए तो ये मरे ही ठीक हैं न कि जीते हुए विरोध करते।

तेनान्यायेन सञ्जातो महाक्षोभः समन्ततः।
निर्दोषिरक्षणाशक्तं तप्यते स्म च भारतम् ॥ २८ ॥

(२८) इस अन्यायसे सब ओरसे महान् क्षोभ हो गया। और निरपराधियोंकी रक्षामें असमर्थ भारतवर्ष जलने लगा।

दुरात्मन्याङ्गले राज्ये न्याय एवं विधीयते।
यस्यार्थः केवलं पीडा प्रजानां न तु रक्षणम् ॥ २९ ॥

(२९) दुरात्मा अंग्रेजके राज्यमें न्याय ऐसाही है। जिसका अभिप्राय केवल प्रजाको सन्ताप देनाही है न कि रक्षा करना।

एकोऽपि वस्तुतो न्यायो द्विविधः स्यात्प्रयोगतः ।
आङ्ग्लायैकः सदोपाय देश्यायैको निरागसे ॥ ३० ॥

(३०) वास्तवमें एकही प्रकारका न्यायप्रयोगमें दो प्रकारका हो सकता है । अपराधी अंग्रेजके लिए तो एक प्रकारका और निरपराधी भारतीयके लिए दूसरे प्रकारका ।

किं कार्यं परराज्येन सततं पक्षपातिना ।
हितेप्सुना सवर्णानां देशजानां विघातिना ॥ ३१ ॥

(३१) भारतीयोंके विघातक, अपने जैसे वर्णवालोंके लिए हितैषी तथा सदैव पक्षपातपूर्ण ऐसे राज्यसे क्या लाभ है ?

पाश्चात्त्येषु ह्यनेकेषु कृतघातेष्वनेकदा ।
न्यायो व्यनक्ति केनापि व्याजेन किल सौम्यताम् ॥ ३२ ॥

(३२) कई पाश्चात्योंके अनेकबार अपराध करने पर भी किसी बहानेसे न्याय-सौम्यत्व प्रकाशित करता है ।

अयं तु भारतीयस्य न्यायो भिन्नप्रकारकः ।
शङ्कालवोऽपि पर्याप्तो यदाक्षेप्तुमनागसम् ॥ ३३ ॥

(३३) भारतीयके लिए तो न्याय दूसरी ही प्रकारका होता है क्योंकि निरपराधीको अभियुक्त सिद्ध करनेके लिए शंकाका कणमात्र भी पर्याप्त हो सकता है ।

अनेनैव प्रकारेण भारतीयाः सहस्रशः ।
बन्धनं वापि दण्डं वा निर्दोषा अपि लम्भिताः ॥ ३४ ॥

(३४) इस प्रकारसे हजारों भारतीय निर्दोष होते हुए भी जैसे कैसे कैद अथवा दण्ड दीए दिए गए ।

धिग् राज्यं यन्न जानीयात् सत्यासत्यविवेचनम् ।
निजोत्कर्षमदोन्मत्तः कुतः कर्मफलं स्मरेत् ॥ ३५ ॥

(३५) जो राज्य सत्यासत्यके विवेचनको नहीं समझता है उसे धिक्कार है । अपनी उन्नतिके मदमे उन्मत्त हुआ मनुष्य अपने कर्मके फलोंको कैसे सोचेगा ।

किं वा श्रेयः प्रतीक्ष्येत स्वार्थिनः परशासितुः ।
भारते यः स्थितोऽप्यस्मिन् स्वदेशाभिमुखः सदा ॥ ३६ ॥

(३६) स्वार्थपर उस अंग्रेज शासकसे किस कल्याणकारी आशा की जा सकती है जो भारतमें बैठा हुआ दृष्टि अपने देश ही पर लगाए रहता है।

पञ्चदशोऽध्यायः

यथा यथा प्रजापीडा गता वृद्धिं तथा तथा ।
क्रमो राष्ट्रियकार्यस्य परां कोटिमुपागतः ॥ १ ॥

(१) ज्यों प्रजाका दुःख बढ़ता गया त्यों ही राष्ट्रीय कार्य भी ऊँची कोटिपर पहुँचता गया।

राष्ट्रीयसंसदध्यक्षैरनुमत्या सभासदाम् ।
युद्धसङ्घाः प्रतिस्थानं यथाविधि विनिर्मिताः ॥ २ ॥

(२) राष्ट्रीय संसदके (कॉंग्रेसके) अध्यक्षोंने सभासदोंकी अनुमत्यनुसार यथाविधि हर स्थानमें (सत्याग्रह) युद्धसङ्घ बना दिए।

अध्यक्षाधिष्ठिताश्चैते साङ्गोपाङ्गबलोर्जिताः ।
कृत्स्नराष्ट्रीयकार्याणामनुयोज्याः प्रकल्पिताः ॥ ३ ॥

(३) अध्यक्षों द्वारा अधिष्ठित—सांगोपांग अर्थात् पूर्णरूपसे बलके कारण वृद्धिको प्राप्त, सब राष्ट्रीय कामोंके लिए काम करनेवाले नियुक्त कर लिए गये।

जनप्रस्थानहेतोर्वा समामेलनतोऽपि वा ।
ध्वजारोपनिमित्तं वा लवणस्य कृतेऽपि वा ॥ ४ ॥

(४) लोगोंके प्रस्थानके कारण हो, या सभाके लिए हो अथवा ध्वजा अर्थात् राष्ट्रीय झंडेके गाड़नेके लिए हो।

दूषितो युद्धसङ्घश्चेत्तदा राज्याधिकारिभिः ।
अध्यक्षः सपरीवारः क्षिप्यते स्म हि बन्धने ॥ ५ ॥

(५) यदि युद्धसङ्घ दोषी ठहरा जाता था तो उसका नेता स-परिवार कैदखानेमें डाल दिया जाता था।

निषिद्धास्वपि संसत्सु समवेयुर्दिवानिशम् ।
राष्ट्रकार्योद्यता लोकाः सर्वेषु नगरेष्वपि ॥ ६ ॥

(६) सभाओंके निषिद्ध होनेपर भी राष्ट्रीय काम करनेमें तत्पर लोग सब नगरोंमें दिनरात इकट्ठे होते थे।

अथैकस्मिन् रवेर्वारे मुम्बापुर्यामजायत ।
अत्याचारः परं गर्ह्यो रक्षोवृत्त्यनुरूपकः ॥ ७ ॥

(७) एक रविवारके दिन मुम्बापुरीमें सिपाही वृत्तिके अनुरूपही एक बहुत घृणित अत्याचार हुआ।

मिलिता युद्धसङ्घेऽस्मिन्नीतेऽवन्तिकया स्त्रिया ।
ध्वजारोपणकार्यार्थं नरनार्यः सहस्रशः ॥ ८ ॥

(८) अवन्तिकाबाईके नेतृत्ववाले इस युद्धसङ्घमें झंडा गाड़नेके लिए हजारोंकी संख्यामें स्त्री-पुरुष इकट्ठे हो गए।

कार्येऽमुष्मिन्निषिद्धेऽपि दारुणैरधिकारिभिः ।
सत्याग्रहपरैर्लोकैः स निषेधो निराकृतः ॥ ९ ॥

(९) निर्दयी अधिकारियों द्वारा इस काम पर निषेध डाले जाने पर भी सत्याग्रहमें लग्न जनताने उस निषेधकी परवाह न की।

समाप्ते ध्वजकार्येऽथ तत्रस्था सङ्घनायिका ।
अवन्तिका निरुद्धाभूत् प्रसभं राज्यशासकैः ॥ १० ॥

(१०) झंडाकार्यकी समाप्ति होने पर राज्यशासकोंने जबरदस्ती वहाँके खड़ी हुई वह सबकी नेत्री रोक ली।

सङ्घर्षोऽथ महाञ्जातो मुम्बापुर्यां सुविश्रुतः ।
रक्षिणां दण्डहस्तानां देशसेवाजनस्य च ॥ ११ ॥

(११) बम्बई नगरमें लाठी हाथमें लिए हुए रक्षकों तथा देशसेवा संलग्न लोगोंका विख्यात महान् युद्ध हुआ ।

सेविकाभ्यो यदा हर्तुं न शेकू राष्ट्रियध्वजान् ।
रक्षिणः पशुतुल्यास्ते प्रहर्तुं ताः समुद्यताः ॥ १२ ॥

(१२) पशुतुल्य सिपाही जब सेविकाओंके हाथोंसे राष्ट्रीय झंडोंको छीननेमें असमर्थ हो गए तो उन्होंने उन्हें (सेविकाओंकी) पीटना शुरू किया ।

रक्तस्रावाप्लुताश्चापि पताकानां स्वबालवत् ।
अकुर्वन् रक्षणं यावन्मुमूर्च्छुर्देशसेविकाः ॥ १३ ॥

(१३) खूनसे लथपथ होकर भी उन्होंने झंडेकी रक्षा तबतक की जबतक वे बेहोश न हो गईं ।

सहावन्तिकया क्षिप्ताः कारायां काश्चिदङ्गनाः ।
अन्या नीतास्तमोमय्यां रजन्यां निर्जनं वनम् ॥ १४ ॥

(१४) कई एक स्त्रियाँ अवन्तीकाके साथही कैदमें डाल दी गईं । कई अन्धेरे रातमें निर्जनवनमें लिवा ली गईं ।

विसृष्टास्तत्र सन्नार्यो विविधक्लेशपीडिताः ।
भीषिताश्च नरव्याघ्रैर्निरन्नाश्च निराश्रयाः ॥ १५ ॥

(१५) वहाँ छोड़ीं हुईं विविध क्लेशोंसे पीड़ित भूँखी और आश्रयहीन उन साध्वी स्त्रियोंको उन पशुतुल्य मनुष्योंने डराया।

दशक्रोशविदूरस्थाद् भयानकवनस्थलात् ।
स्वगेहं निर्भयं पद्भ्यां न्यवर्तन्त सहिष्णवः ॥ १६ ॥

(१६) वे सहिष्णु रमणियाँ दस कोसकी दूरीपर स्थित उस भयानक वनस्थलीसे निर्भय होकर अपने घरोंको लौटीं ।

कलेवरं वशीकर्तुं समर्थोऽपि प्रशासकः ।
निश्चितानां महोत्साहमपहर्तुं न शक्नुयात् ॥ २३ ॥

(२३) *शासक शरीरको वश करनेमें समर्थ होता हुआ भी* निश्चित मनवालोंके महान् उत्साहको न हर सका ।

अलं शमयितुं दीपं बालोऽपि श्वासलेशतः ।
निर्वापयितुमर्कस्य ज्योतिस्तु प्रभुरस्ति कः ॥ २४ ॥

(२४) दीपकको बुझानेके लिए एक बच्चा भी छोटीसी साँसद्वारा समर्थ हो सकता है पर सूर्यकी ज्योतिको बुझानेके लिए कौन समर्थ हो सकता है ?

भिन्द्यात्प्रायेण मल्लोऽपि शिलास्तम्भं बृहत्तरम् ।
कल्पान्तेऽपि न शक्तः स्याद्वक्रीकर्तुं मनागपि ॥ २५ ॥

(२५) *मल्ल एक पत्थरके बने हुए स्तम्भको तोड़ तो चाहे ले पर कल्पके* अन्त तक भी चाहे यत्न करे उसे टेढ़ा तो थोड़ासा भी न कर सकेगा ।

जलमुत्क्वथितं चापि पुनर्गच्छति शीतताम् ।
मनस्तु क्षुभितं नृणां न निवर्तेत लक्ष्यतः ॥ २६ ॥

(२६) *उबलता हुआ पानी फिर ठण्डा हो जाता है पर मनुष्योंका* क्षुब्ध हुआ २ मन लक्ष्यसे नहीं हटाया जा सकता है ।

शक्यो वारयितुं चापि कथंचिद्वडवानलः ।
न तु मोहयितुं शक्यः सकृज्जागरितो जनः ॥ २७ ॥

(२७) वडवाग्नि किसी प्रकारसे चाहे निवारण की जा सके पर एक बार जागृतिको प्राप्त हुआ २ मनुष्य फिरसे मूढ़ नहीं बनाया जा सकता है ।

अत एव प्रबुद्धास्ते महोत्साहप्रचोदिताः ।
देशकार्यपथे जग्मुर्भारतीयाः पुरः पुरः ॥ २८ ॥

(२८) इसलिए बड़े उत्साहसे प्रेरित हुए २ जागृतिको प्राप्त वे भारतीय लोग देशकार्यके मार्ग पर आगे २ बढ़े । अर्थात् पीछे न हटे ।

षोडशोऽध्यायः ।

अधर्म्या नियमास्तस्मिन् काले कैश्चिद्विनिर्मिताः ।
प्रजास्त्रासयितुं भूयः क्रूर राज्याधिकारिभिः ॥ १ ॥

(१) उस समय फिर निर्दयी राज्याधिकारियों द्वारा प्रजाओंको डरानेके लिए कई एक धर्मविरुद्ध नियम बनाए गए ।

परदेशीयवस्त्राणां विक्रयस्य निरोधकाः ।
दोषिणः कल्पिता नूत्नशासनस्य प्रभावतः ॥ २ ॥

(२) नए शासनके प्रभावसे विदेशी वस्त्रोंकी बिक्रीको रोकनेवाले कई लोग दोषी ठहराए गए ।

नियमोल्लङ्घिनश्चेति वीराः स्वार्थपराङ्मुखाः ।
प्रत्यहं शतशो रुद्धा देशसेवासमुद्यताः ॥ ३ ॥

(३) स्वार्थसे पराङ्मुख अर्थात् निस्स्वार्थी देशसेवाके लिए तत्पर वीर प्रतिदिन सैकड़ोंकी संख्यामें कैद करलिए गए ।

एवं नानाप्रकारेण जनेषु त्रासितेष्वपि ।
कार्यमेकफलासक्तं प्राचलद्विरतिं विना ॥ ४ ॥

(४) इस प्रकार लोगोंके कई प्रकारसे डराए जाने पर भी एक फलमें लगा हुआ अर्थात् एक लक्ष्यमें रखा हुआ कार्य बिनविरामके चलता रहा ।

दृष्ट्वा निश्चयमेतेषां धन्यानां देशसेविनाम् ।
स्वार्थलुब्धो वणिग्लोकश्छद्मकर्मोपचक्रमे ॥ ५ ॥

(५) इन सौभाग्यशील देशसेवकोंके निश्चयको देखकर स्वार्थमें लुब्ध वणिक लोगोंने कपट व्यवहार करना शुरू किया ।

तद्विक्रयाद्विरंस्याम इत्याश्रुत्यापि वञ्चकाः ।
प्राहिण्वन् परवस्त्राणि रजन्यां नगरान्तरम् ॥ ६ ॥

(६) 'हम विदेशी मालकी बिक्री न करेंगे' यह प्रतिज्ञा करके भी इन ठगोंने रातमें ही दूसरे नगरको परदेशके वस्त्र भेजे ।

कापट्यं वणिजां बुद्ध्वा तद्वाणिज्यं रुरुत्सवः ।
कुमाराः सैनिका रात्रौ सावधानमजागरुः ॥ ७ ॥

(७) व्यापारी लोगोंके कपट व्यवहारको जान कर उनके व्यापार रोकनेकी इच्छा रखनवाले कुमार सैनिकोंने रातमें अवधानपूर्वक जागरण किया।

ततस्साहसमाश्रित्य छद्मजीवी वणिग्जनः ।
प्रजिघाय स्ववाणिज्यं यन्त्रयानैरहन्यपि ॥ ८ ॥

(८) कपटकी आजीविकावाले व्यापारी जनोंने साहसका आश्रय लेकर दिनमें ही हवाई जहाजों अथवा मोटरकारों अपने व्यापारकी वस्तुए भिजवा दीं।

सैनिका अचलोत्साहा रथानां शिश्यिरे पुरः ।
विदेशवस्त्रपूर्णानां तद्विक्रयरुरुत्सया ॥ ९ ॥

(९) विदेशी वस्त्रोंकी बिक्रीकी रोकनेकी इच्छासे अचल उत्साहवाले सैनिक उन वस्त्रोंसे भरे हुए रथोंके सामने ही सोगए।

दर्शितापूर्वधैर्यैस्तैस्तरुणैर्देशसेवकैः ।
आत्मानं धर्षितं मत्वा प्राकुप्यन्नधिकारिणः ॥ १० ॥

(१०) उन युवक देशसेवकोंके अपूर्व धैर्य दिखलाने पर अधिकारी लोग अपनेको हारा हुआ समझ कर अति क्रुद्ध हुए।

शयितानामुपर्येव रथाः सम्भारसम्भृताः ।
वाह्यन्तामिति पापात्मा दण्डपालः समादिशत् ॥ ११ ॥

(११) पापी दण्डपालने सोते हुओंके ऊपरसे ही मालके भरे हुए रथोंके गुजार देनेकी आज्ञा दे दी।

दारुणे शासने तस्मिन् प्रवृत्ते चाप्यशेरत ।
पुरस्ताद्यन्त्रयानानां निर्भया देशसेवकाः ॥ १२ ॥

(१२) उस भीषण आज्ञाके चालू होने पर भी देशसेवक निर्भीक होकर मोटरोंके सामने लोट गए।

अथैकस्मिन् दिनेऽनर्थः सञ्जातोऽतिभयङ्करः ।
कारणं यस्य घोराज्ञा नृशंसस्याधिकारिणः ॥ १३ ॥

(१३) अब एक दिन एक भयंकर अनर्थ हो गया जिसका कारण निर्दयी अधिकारीकी घोर आज्ञा थी।

बाबुर्नाम युवा कश्चित्साहसी तनुजो गणोः ।
गमनोन्मुखयानाग्रे दण्डवत्पतितो भुवि ॥ १४ ॥

(१४) बाबू नाम का गणु (गणेश) का पुत्र एक साहसी युवक, चलनेके लिए उद्यत मोटरके सामने दण्डके समान जमीन पर गिर पड़ा।

रक्षकैरप्यपाकृष्टः पशुकर्षं पशूपमैः ।
अशेत स युवा भूमौ रथस्याग्रे कृताञ्जलिः ॥ १५ ॥

(१५) पशुवत्–पशुतुल्य–स्वभाववाले रक्षकों द्वारा खेंचा गया भी वह युवक हाथ बान्धे जमीन पर सो गया।

स सारथिः पराधीनो देहस्योपर्यवाहयत् ।
रथं तस्य कुमारस्य चूर्णयन्नग्रमस्तकम् ॥ १६ ॥

(१६) मोटरके गुज़रने पर बड़ा कोलाहल मच गया। देशसेवकों हर ओरसे गणुके पुत्रके पास पहुँचे।

याने तस्मिन्नतिक्रान्ते सञ्जज्ञे सम्भ्रमो महान् ।
परिवव्रुः समन्ताच्च गाणवं देशसेवकाः ॥ १७ ॥

(१७) पराधीन उस मोटर चलानेवालेने कुमारके मस्तकको तोड़ते हुए मोटर उसके शरीरके ऊपरसे गुज़ार दी।

देहस्योपर्यतिक्रान्ते यानेऽस्मिन्नपि घातुके ।
नानशन् गणुपुत्रस्य प्राणा वीरस्य कृत्स्नशः ॥ १८ ॥

(१८) इस हत्या करनेवाली मोटरके उसके शरीरके ऊपरसे गुज़र जाने पर भी वीर गणु पुत्रके प्राण जल्दीसे न निकले।

मूर्च्छितस्तरुणो नीतो दयार्द्रैर्देशबन्धुभिः ।
गेहं गोकुलदासेन कल्पितं रोगिणां कृते ॥ १९ ॥

(१९) दयालु देशसेवकों (भाइयों) द्वारा वह मूर्च्छित युवा गोकुलदास द्वारा बनाए गए हस्पतालमें लिवा लिया गया।

तस्योत्तरक्रियायाः प्राक् स्थापितः प्रेतमन्दिरे ।
आनिशान्तं शवस्तस्य दर्शनाय दिदृक्षुभिः ॥ २० ॥

(२०) उसकी उत्तरक्रिया अर्थात् मरणोपरान्त क्रियाकलापसे पहले दर्शनेच्छुक जनोंके दर्शनके लिए रात भर उसका मृत शरीर प्रेतमन्दिर (मुर्दाखाने) में रखा गया।

अथाजग्मुर्जना रात्रौ मन्दिरं तत्सहस्रशः ।
गणुपुत्रमलङ्कर्तुं गन्धपुष्पसरादिभिः ॥ २१ ॥

(२१) रातमें हज़ारों लोक गणुपुत्रके शरीरको सुगन्धित पुष्पमालाओंसे सजानेके लिए आए।

तं युवानं नमश्चक्रुर्वृद्धाश्च तरुणैः समम् ।
आशिषश्चावदन्नार्यः स्पृशन्त्यस्तत्पदद्वयम् ॥ २२ ॥

(२२) बूढ़ोंने युवक जनोंके साथ उस युवकको प्रणाम किया। उसके दोनो चरणोंको छूती हुई स्त्रियोंने उसे आशीर्वाद दी।

अन्येद्युरनु तं जग्मुः श्मशानं शतशो जनाः ।
महावीरगतेर्योग्यं मानं तस्य चिकीर्षवः ॥ २३ ॥

(२३) उस महावीरकी गतिके समान आदर देनेकी इच्छासे दूसरे दिन सैकड़ों मनुष्य उसके पीछे गए।

किं धनैरसुभिः किं वा स्वदेशार्थमनर्पितैः ।
इतीव शासितुं लोकान् स युवा जीवितं जहौ ॥ २४ ॥

(२४) 'जो धन और प्राण स्वदेशकी सेवामें अर्पण नहीं किए गए उनसे क्या प्रयोजन है?' लोगोंको मानो यह शिक्षा देता हुआ अथवा ऐसी आज्ञा देता वह युवक मर गया।

जाड्योपहतचेतस्त्वं नृणां निर्लज्जकर्मणाम् ।
रुणद्धि सुतरां वृद्धिं देशस्यापि तु नाशकम् ॥ ३१ ॥

(३१) लज्जाहीन कामोंमें आसक्त मनुष्योंकी बुद्धि उन्नतिके कार्योंमें रुकावट होती है और देशका भी नाश करती है।

भारभूता भुवः सन्ति प्रेततुल्या नरा इमे ।
स्वार्थैकतत्परत्वेन देशस्यैव विनाशकाः ॥ ३२ ॥

(३२) ये प्रेत अर्थात् मृतकके समान मनुष्य पृथिवीके लिए भार-स्वरूप होते हैं। स्वार्थैक पर होनेके कारण देशहीके नाशक होते हैं।

वरं ते नैव जाताः स्युर्देशकल्याणघातुकाः ।
प्रवृत्तिस्तामसी येषां देशदासत्वकारणम् ॥ ३३ ॥

(३३) देशके कल्याणको नष्ट करनेवाले ये लोग उत्पन्न ही न हों तो अच्छा है। जिनकी तमोगुणमयी प्रवृत्ति देशके दासत्वका कारण होती है।

परेभ्योऽपि स्वदेशीयाः शत्रवस्ते महत्तराः ।
इति चेतसि कर्तव्यं देशमुक्तिमभीप्सुभिः ॥ ३४ ॥

(३४) देशकी मुक्ति चाहनेवालोंको यह समझ लेना चाहिए कि ऐसे लोग स्वदेशीय होते हुए भी दूसरोंसे भी बढ़कर शत्रु हैं।

परस्य निर्जयात्पूर्वं स्वार्थमग्नान् वणिग्जनान् ।
देशभक्ता वशीकुर्युः सदुपायेन केनचित् ॥ ३५ ॥

(३५) देशभक्तोंको दूसरोंको जीतनेकी अपेक्षा किसी अच्छे उपायसे इन स्वार्थमग्न व्यापारी जनोंको वशमें लाना चाहिए।

किंनिमित्तं निरोद्धव्यो विदेशाम्बरविक्रयः ।
इति बोधयितव्यास्ते वचनैः सोपपत्तिभिः ॥ ३६ ॥

(३६) विदेश वस्त्रोंका बेचना किसलिए बन्द करना चाहिए—यह बात युक्तियुक्त वचनों द्वारा उन्हें समझानी चाहिए

लोकाः परयुगे बद्धा बालेभ्योऽप्यबलाः किल ।
रोदनेन जयेद्बालो दासस्तु न कथञ्चन ॥ ३७ ॥

(३७) दूसरोंकी पञ्जाओंमें बान्धे हुए लोग बच्चोंसे भी अधिक असहाय होते हैं। बच्चा तो रोकर जीत लेता है, दास तो किसी भी प्रकारसे नहीं जीतता।

प्रति शत्रुमशक्तानां बलमेकं हि केवलम् ।
परवस्त्रबहिष्कारः परं सत्याग्रहायुधम् ॥ ३८ ॥

(३८) शत्रुके प्रति निर्बल लोगोंका एक मात्रही बल है—विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार और सत्याग्रह यही महान् हथ्यार।

अस्यायुधस्य माहात्म्यं न बुद्धमखिलैर्जनैः ।
सन्त्येव केचिदद्यापि सत्याग्रहविनिन्दकाः ॥ ३९ ॥

(३९) सब मनुष्योंने इस हथ्यारके माहात्म्यको नहीं समझा है। आज भी सत्याग्रहकी निन्दा करनेवाले कई एक लोग विद्यमान हैं।

स्वार्थत्यागमुदाराणां चाक्षिपन्ति परेऽधमाः ।
सङ्ख्या त्वेषां विमूढानां हीयते दैवतः शनैः ॥ ४० ॥

(४०) अधम शत्रुलोग उदार प्रकृतिवालोंके स्वार्थत्यागकी निन्दा करते हैं; इन मूर्खोंकी संख्या प्रारब्धवशात् प्रतिदिन न्यून हो रही है।

सत्याग्रहस्य माहात्म्यं यदुक्तं गान्धिना पुरा ।
तेन तत्संशयालुभ्यः पुनश्च विशदीकृतम् ॥ ४१ ॥

(४१) गान्धीने पहले जो सत्याग्रह का महत्त्व बताया था उसके अर्थात् सत्याग्रहके बारेमें संशयालुओंके प्रति फिर वो महत्त्व उसीने विशद कर दिया।

देशसेवक एकैकः सोत्साहमवबोधयेत् ।
देशबन्धून् विमूढांस्तान् सत्याग्रहसुवैभवम् ॥ ४२ ॥

(४२) प्रत्येक देशसेवक अपने उन मूर्ख देशभाइयोंको उत्साहपूर्वक सत्याग्रहके सुन्दर वैभवको समझाए।

जाड्योपहतचेतस्त्वं नृणां निर्लज्जकर्मणाम् ।
रुणद्धि सुतरां वृद्धिं देशस्यापि तु नाशकम् ॥ ३१ ॥

(३१) लज्जाहीन कार्योंमें आसक्त मनुष्योंकी बुद्धि उन्नतिके कार्योंमें रुकावट होती है और देशका भी नाश करती है।

भारभूता भुवः सन्ति प्रेततुल्या नरा इमे ।
स्वार्थकतत्परत्वेन देशस्यैव विनाशकाः ॥ ३२ ॥

(३२) ये प्रेत अर्थात् मृतकके समान मनुष्य पृथिवीके लिए भार-स्वरूप होते हैं। स्वार्थैक पर होनेके कारण देशहीके नाशक होते हैं।

वरं ते नैव जाताः स्युर्देशकल्याणघातुकाः ।
प्रवृत्तिस्तामसी येषां देशदासत्वकारणम् ॥ ३३ ॥

(३३) देशके कल्याणको नष्ट करनेवाले ये लोग उत्पन्न ही न हों तो अच्छा है। जिनकी तमोगुणमयी प्रवृत्ति देशके दासत्वका कारण होती है।

परेभ्योऽपि स्वदेशीयाः शत्रवस्ते महत्तराः ।
इति चेतसि कर्तव्यं देशमुक्तिमभीप्सुभिः ॥ ३४ ॥

(३४) देशकी मुक्ति चाहनेवालोंको यह समझ लेना चाहिए कि ऐसे लोग स्वदेशीय होते हुए भी दूसरोंसे भी बढ़कर शत्रु हैं।

परस्य निर्जयात्पूर्वं स्वार्थमग्नान् वणिग्जनान् ।
देशभक्ता वशीकुर्युः सदुपायेन केनचित् ॥ ३५ ॥

(३५) देशभक्तोंको दूसरोंको जीतनेकी अपेक्षा किसी अच्छे उपायसे इन स्वार्थमग्न व्यापारी जनोंको वशमें लाना चाहिए।

किंनिमित्त निरोद्धव्यो विदेशाम्बरविक्रयः ।
इति बोधयितव्यास्ते वचनैः सोपपत्तिभिः ॥ ३६ ॥

(३६) विदेश वस्त्रोंका बेचना किसलिए बन्द करना चाहिए—यह बात युक्तियुक्त वचनों द्वारा उन्हें समझानी चाहिए।

लोकाः परयुगे बद्धा बालेभ्योऽप्यबलाः किल ।
रोदनेन जयेद्बालो दासस्तु न कथञ्चन ॥ ३७ ॥

(३७) दूसरोंकी पञ्जालिमें बान्धे हुए लोग बच्चोंसे भी अधिक असहाय होते हैं। बचा तो रोकर जीत लेता है, दास तो किसी भी प्रकारसे नहीं जीतता।

प्रति शत्रुमशक्तानां बलमेकं हि केवलम् ।
परवस्त्रबहिष्कारः परं सत्याग्रहायुधम् ॥ ३८ ॥

(३८) शत्रुके प्रति निर्बल लोगोंका एक मात्रही बल है—विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार और सत्याग्रह यही महान् हथ्यार।

अस्यायुधस्य माहात्म्यं न बुद्धमखिलैर्जनैः ।
सन्त्येव केचिदद्यापि सत्याग्रहविनिन्दकाः ॥ ३९ ॥

(३९) सब मनुष्योंने इस हथ्यारके माहात्म्यको नहीं समझा है। आज भी सत्याग्रहकी निन्दा करनेवाले कई एक लोग विद्यमान हैं।

स्वार्थत्यागमुदाराणां चाक्षिपन्ति परेऽधमाः ।
सङ्ख्या त्वेषां विमूढानां हीयते दैवतः शनैः ॥ ४० ॥

(४०) अधम शत्रुलोग उदार प्रकृतिवालोंके स्वार्थत्यागकी निन्दा करते हैं; इन मूर्खोंकी संख्या प्रारब्धवशात् प्रतिदिन न्यून हो रही है।

सत्याग्रहस्य माहात्म्यं यदुक्तं गान्धिना पुरा ।
तेन तत्संशयालुभ्यः पुनश्च विशदीकृतम् ॥ ४१ ॥

(४१) गान्धीने पहले जो सत्याग्रह का महत्व बताया था उसके अर्थात् सत्याग्रहके बारेमें संशयालुओंके प्रति फिर वो महत्व उसीने विशद कर दिया।

देशसेवक एकैकः सोत्साहमवबोधयेत् ।
देशबन्धून् विमूढांस्तान् सत्याग्रहसुवैभवम् ॥ ४२ ॥

(४२) प्रत्येक देशसेवक अपने उन मूर्ख देशभाईयोंको उत्साहपूर्वक सत्याग्रहके सुन्दर वैभवको समझाए।

कार्यमेतन्महाकष्टं कामं भवतु दुर्गमम् ।
तथापि न खलु त्याज्यं सुधीरैर्देशसेवकैः ॥ ४३ ॥

(४३) यह काम बड़ी मिहनतका और कठिन चाहे भले ही हो तोभी सुधीर देशसेवकोंको इसे कभी नहीं छोड़ना चाहिए।

सुगमं यत्तु कार्यं स्यात्फलतो लघु तद्भवेत् ।
दुर्गमं चापि सत्कार्यं पुष्णाति फलगौरवम् ॥ ४४ ॥

(४४) जो काम सुगम होता है वह फलसे छोटा हो सकता है। और अच्छा काम दुर्गम अर्थात् कठिन होता हुआ भी फलके गौरवको पुष्ट करता है।

अजरा तस्य कीर्तिः स्याद्येन मूढस्य चेतसि ।
तत्त्वं निरूढिमानीतं सुवचोभिः सयुक्तिकैः ॥ ४५ ॥

(४५) जो मनुष्य मूर्खोंके मनमें सुन्दर युक्तियुक्त वचनोंसे तत्त्वको बिठा देता है उसका यश कभी पुराना नहीं होता है।

उत्पादयितुकामश्चेदुत्साहं बन्धुमानसे ।
निस्पृहः स चरेन्नित्यं स्वयं निरभिमानतः ॥ ४६ ॥

(४६) जो आदमी अपने भाईके मनमें उत्साह पैदा करनेकी इच्छा रखता है उसको अभिमानरहित नित्यमेव निस्पृह विचरण करना चाहिए।

राजायं विभवाढ्योऽयं क्रैस्तोऽयं पारसीयकः ।
नेमाः शक्या निरुत्साहाः परिवर्तयितुं जनाः ॥ ४७ ॥

(४७) यह राजा है—यह धनी है—यह ईसाई है या पारसी है। ये दुर्बल हैं—निरुत्साह हैं—इस लिये ये बदले नहीं जा सकता है।

इति मत्वा न भेतव्यं देशसेवां चिकीर्षुभिः ।
दासभावपरिक्लिष्टैरवलम्ब्या हि धीरता ॥ ४८ ॥

(४८) ऐसा समझकर देशसेवा करनेकी इच्छा रखनेवालोंको डरना नहीं चाहिए। दासभावमें जकड़े दुःखोंको निश्चयसे धैर्यका आश्रय लेना चाहिए।

श्रुत्वापि वचनं युक्तं जनश्चेद्विमुखः स्थितः ।
भग्नाशो न भवेत्तेन देशभक्तो मनागपि ॥ ४९ ॥

(४९) यदि युक्तवचन सुनकर भी लोग विमुखहीं रहें तो देशभक्तको जरा भी निराश नहीं होना चाहिए।

हरेद्यौक्तिकवादेन विकल्पान् मन्दचेतसाम् ।
यावच्च नाप्नुयात्सिद्धिं जह्यात्कार्यं न सेवकः ॥ ५० ॥

(५०) सेवकको चाहिए कि मन्दबुद्धीवाले लोगोंके संशयोंको युक्तियुक्त वचनोंसे दूर करे। और जबतक सफलता न मिले अपना काम न छोड़े।

पुनः पुनः कृतो यत्नः प्रबोधाय जडात्मनाम् ।
न सिध्येद्यदि कर्तव्या समाजात्तद्बहिष्कृतिः ॥ ५१ ॥

(५१) बार बार समझानेके लिए यत्न करने पर भी यदि जडात्माओंको सिद्धि न मिले तो उनकी समाजसे बहिष्कृति कर देनी चाहिए।

बहिष्कारे कृते तेषामाशु शुद्धिर्भविष्यति ।
दृढेन व्यवसायेन कष्टमेवं समुत्तरेत् ॥ ५२ ॥

(५२) उनका बहिष्कार करने पर शीघ्रही शुद्धि हो जाएगी। दृढ उद्योगसे इस प्रकार कष्टको पार करना चाहिए।

सप्तदशोऽध्यायः

दिनैरथ व्यतिक्रान्तैररुध्यन्ताधिकारिभिः ।
राष्ट्रीयपरिवर्तेऽस्मिन् देशभक्ताः सहस्रशः ॥ १ ॥

(१) इस प्रकार दिन गुजरने पर अधिकारी लोगोंने इस राष्ट्रीय आन्दोलनमें हजारों देशभक्तोंको कैदकर लिया।

अदण्ड्या अपि चत्वारः सोलापुरनिवासिनः ।
वधाज्ञाविपर्यीभूताः स्थिता मृत्युप्रतीक्षिणः ॥ २ ॥

(२) शोलापुरके रहनेवाले चार व्यक्ति दण्डके अयोग्य होने पर भी मौतकी आज्ञाका विषय बन जानेसे अर्थात् दण्डके अधिकारी समझे जानेके कारण मृत्युकी प्रतीक्षा कर रहे थे ।

भारतेनापि कृत्स्नेन तन्मोक्षे प्रार्थितेऽपि च ।
प्रापिता एव ते हन्त साधवो यमसन्निधिम् ॥ ३ ॥

(३) और समस्त भारतके उनको छुटानेकी प्रार्थना करने पर भी शोक है कि वे सज्जन यमके पास पहुँचा दिए गए थे—अर्थात् मार डाल गये थे ।

अन्यायेऽस्मिन् कृते जातः क्षोभः सर्वासु दिक्ष्वपि ।
तत्रापि बोर्सदग्रामे भयोत्पादी विशेषतः ॥ ४ ॥

(४) इस अन्यायके किए जानेपर सब दिशाओंमें हलचल मच गई । वहाँ बोर्सद ग्राममें विशेष रूपसे हलचल हो गई ।

आसील्लीलावती नाम कुलीना गतभर्तृका ।
त्यक्तस्वार्था स्वदेशार्थं परार्थव्रतचारिणी ॥ ५ ॥

(५) एक लीलावती नामवाली उच्च कुलोत्पन्न विधवा अपने देशके लिए स्वार्थका त्याग करनेवाली और परोपकारका व्रत पालनेवाली थी ।

मुम्बापुर्यां पितुर्गेहं सुखावासं विसृज्य सा ।
प्रयाता बोर्सदग्रामे वस्तुं सत्यानुगैः सह ॥ ६ ॥

(६) बम्बई नगरमें सुखपूर्ण पिताके घरका परित्याग करके अपने अनुचरोंके साथ वह बोर्सद ग्राममें रहनेके लिए चल पड़ी ।

ग्रामीणेषु परं स्निग्धा सौम्यवृत्तिः सुभाषिणी ।
पर्यश्रमदहोरात्रं स्वयंसेवकमध्यगा ॥ ७ ॥

(७) ग्रामके लोगोंमें बहुत प्रेम रखनेवाली, सौम्यवृत्तिवाली, मीठा बोलनेवाली वह स्वयंसेवकोंके मध्यमें रहती हुई दिनरात परिश्रम करने लगी ।

श्रुत्वा सा वधवृत्तान्तं सोलानगरवन्दिनाम् ।
वभूवातिसमुद्विग्ना सन्नारी समदुःखिता ॥ ८ ॥

(८) वह साध्वी स्त्री शोलापूर नगरके कैदियोंके वधवृत्तान्तको सुनकर बड़ी समुद्विग्न और उनके दुःखमें दुःखी हुई ।

निषिद्धास्वपि यात्रासु प्रस्थानं समयोजयत् ।
नैकग्राम्याङ्गनाभिः सा सम्मानार्थं निरागसाम् ॥ ९ ॥

(९) यात्राओंके निषिद्ध होने पर भी उस साध्वी स्त्रीने बहुतसी गाँवकी स्त्रियोंके साथ उन निरपराधी जनोंके सम्मानके लिए यात्राकी योजना बनाई ।

प्रस्थानस्य स्वयं नेत्री धीरा लीलावती ततः ।
यथा वितर्कितं पूर्वं गृहीता रक्षकैर्हठात् ॥ १० ॥

(१०) तब प्रस्थानकी स्वयमेव नेत्री बनी हुई वह धैर्यशालिनी लीलावती जैसा कि पहले माना गया है था सिपाहियों द्वारा हठसे पकड़ ली गई ।

रक्षिमण्डपमानीतां दुरात्मा रक्षकाधिपः ।
पप्रच्छ तां बहून प्रश्नान् चिकीर्षुर्दारुणां व्यथाम् ॥ ११ ॥

(११) पोलीस स्थानमें लाई गई से दुरात्मा पोलीसके अफसरने बहुत व्यथा पहुँचानेकी इच्छासे बहुतसे प्रश्न पूछे ।

किं ते नाम पिता कस्ते कुतः प्राप्तासि दुर्मुखि ।
इति सा रक्षिणा पृष्टा यथार्हं प्रत्युवाच तम् ॥ १२ ॥

(१२) 'हे बुरे मुंहवाली, तुम्हारा नाम क्या है ?', 'तुम्हारा पिता कौन है?' 'कहाँ से आई हो?' इस प्रकारके पूछे जाने पर उसने यथायोग्य उसे उत्तर दिया ।

पृष्टा पुनः पितुर्वृत्तमभया सोत्तरं ददौ ।
प्रष्टव्यं भवता नेदं न पित्रा कार्यमस्ति वः ॥ १३ ॥

(१३) पिताका हाल पूछे जाने पर उसने निर्भय होकर उत्तर दिया कि 'आपको मेरे पिताके साथ कुछ वास्ता नहीं है, आपको यह बात नहीं पूछनी चाहिये।'

एवमुक्तस्तया कोपी गर्हमाणो नराधमः ।
लज्जामानविहीनश्च कपोले तामताडयत् ॥ १४ ॥

(१४) इस प्रकार उत्तर पाकर उस क्रोधी, नीच, लज्जा और मानसे रहित मनुष्यने उसे मुंह पर थपेड़ मार दी ।

दृष्टा तामविरुन्धानां सहमानां च दुष्कृतिम् ।
वृद्धमन्युः पुनः साध्वीं प्रजहार खलाधमः ॥ १५ ॥

(१५) जब उस नीच मनुष्यने उसे दुष्कर्मको सहारते देखा और रुकावट न डालते देखा तो उसने उस साध्वी स्त्रीको फिरसे मारा ।

प्रहारैरवसीदन्ती मूर्च्छिता निपपात सा ।
हठान्नीतापरेद्युश्च प्रातः कारालयं द्रुतम् ॥ १६ ॥

(१६) प्रहारोंसे दुःखित हुई मूर्च्छित हुई वह गिर पड़ी और दूसरे दिन जल्दीहीसे कैदखानेको लिवा ली गई ।

अचिरादेष वृत्तान्तो राक्षसीयस्य कर्मणः ।
प्रससर्प प्रतिग्रामं तनौ सर्पविषं यथा ॥ १७ ॥

(१७) इस राक्षसी कर्मका समाचार शीघ्रही प्रत्येक गाँवमें ऐसे फैला जैसे शरीरमें सांपका विष फैलता है ।

अथ गर्ह्यो बलात्कारः पृथिव्यामपुराश्रुतः ।
उडिपग्राम्यलोकेषु विक्षोभमुदपादयत् ॥ १८ ॥

(१८) इस प्रकार पृथिवी पर पहले न सुने गए घृणित बलात्कारसे उड़िया गाँवके लोगोंमें हलचल पैदा हो गई ।

नियोगोऽस्याः समारोधी निरस्तश्च दिनैस्त्रिभिः ।
लीलावत्याश्च मानार्थं प्रस्थानं निश्चितं जनैः ॥ १९ ॥

(१९) यह सभाके निरोध करनेवाली आज्ञा तीनही दिनोंमें हटा दी गई । और लीलावतीके मानके लिए लोगोंने प्रस्थान करनेका निश्चय किया ।

निर्दिष्टदिवसे चाथ सार्धसाहस्रयोषिताम् ।
स्तोमो युवतिवृद्धानां बोर्सदग्राममभ्यगात् ॥ २० ॥

(२०) निर्दिष्ट दिन पर १५०० युवतियों तथा वृद्धियोंका झुंड बोर्सद नगरको पहुँच गया ।

लीलावत्या जयोद्‌घोषं प्रतिध्वनिविमूर्च्छितम् ।
कुर्वाणः प्राविशत्सङ्घो बोर्सदस्य महापथम् ॥ २१ ॥

(२१) लीलावतीके जयजयकारके गूँजते हुए नारे लगाता हुए यह सङ्घ बोर्सदकी बड़ी सड़कमें घुस गया ।

विशाले महिलाव्यूहे समवेयुपि निर्भयम् ।
तस्थुरग्रे वयोवृद्धाः पश्चाद्युवतयोऽखिलाः ॥ २२ ॥

(२२) निर्भयताके साथ चलते हुए उस विशाल महिलासङ्घके अग्रभागमें वृद्ध स्त्रियाँ थीं और उनके पीछे सब युवतीयाँ थीं ।

व्यवस्थिता यथायोग्यं प्रारभन्त सदङ्गनाः ।
उद्गरीतुं जयोद्‌घोषं देशसख्याः कुलस्त्रियः ॥ २३ ॥

(२३) देशकी सखियाँ अर्थात् देशका हित चाहनेवाली कुलीन साध्वी स्त्रियाँ यथायोग्य खड़ी होकर जयजयके नारे लगाने लग पड़ीं ।

क्षणादभ्यापतद् दूरादृदृश्यत सगर्जनम् ।
आग्नेयास्त्रैश्च दण्डैश्च सन्नद्धं रक्षिणां बलम् ॥ २४ ॥

(२४) शीघ्रही बन्दूकों तथा लाठीयोंसे आभूषित गर्जती हुई सिपाहियोंकी सेना आती हुई दिखाई दी ।

राज्याधिकृतदासास्ते प्रधावन्तोऽतिवेगतः ।
भीषणाकृतयः प्रापुर्ग्राम्यस्त्रीजनसन्निधिम् ॥ २५ ॥

(२५) बहुत जोरसे दौड़ते हुए राज्यके अधिकारस्थित नौकर भीषण आकृतियोवाले गाँवकी स्त्रियोंके पास पहुँच गए ।

अयि दास्यश्च वेश्याश्च स्वस्वगेहानि गच्छत ।
स्तन्यं वा दत्त डिम्भेभ्यः सन्तर्पयत वा विटान् ॥ २६ ॥

(२६) 'हे दासियो ! हे वेश्याओ ! अपने २ घरोंको जाओ । या तो बच्चोंको दूध पिलाओ या विटोंकी कामतृप्ति करो ।

न किञ्चिदिह कार्यं वस्त्वरितं गम्यतामितः ।
गोष्ठकेषु करीषाणि कुरुध्वं च यथोचितम् ॥ २७ ॥

(२७) 'तुम्हारा यहाँ कुछ काम नहीं है । यहाँसे शीघ्र चली जाओ । गोष्ठमें यथोचित उपले करो ।

अथ चेन्न निवर्तध्वे परं ताडनमाप्स्यथ ।
इत्यनेकैर्दुरालापैर्दुष्टास्तेऽस्तर्जयन्त ताः ॥ २८ ॥

(२८) 'यदि लौटकर नहीं जाओगी तो बड़ी मार पड़ेगी ।' इस प्रकारके अनेकों दुर्वचनोंसे दुष्टोंने उन्हें फटकारा ।

अनादृत्य दुरुक्तानि निर्भयाः सपताकिकाः ।
घोषयन्तः स्थिता नार्यो जयशब्दं पुनः पुनः ॥ २९ ॥

(२९) झंडे उठाए हुए वे स्त्रियां फिर जयजयकारके नारे लगाती हुई निर्भयतापूर्वक उनके दुर्वचनोंका निरादर करके ठहरी रहीं ।

शान्तवृत्तिषु तास्वेवं स्थितासु नरराक्षसाः ।
अभ्यद्रवन् सवेगं ते ग्राम्यस्त्रीजनमध्यतः ॥ ३० ॥

(३०) वे मरत्यी राक्षस उन्हें इस प्रकार शान्तवृत्तिमें खड़ी हुई देखकर जोरसे उन गाँवकी स्त्रियोंके बीचमें आक्रमण किया ।

याः पुनः स्तनयोर्मध्ये ध्वजान्नार्यो जुगूहिरे ।
कुट्टितास्ता नरैर्नीचैर्निपेतुर्मूर्च्छिता भुवि ॥ ३७ ॥

(३७) जिन स्त्रियोंने अपनी छातियोंके बीचमें झंडोंको छिपाया हुआ था उन्हे जब नीच आदमियोंने पीटा तो वे मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी।

इतरास्तु पराभूता व्यकीर्यन्त पृथक् पृथक् ।
विद्राविताः सफूत्कारं रक्षिभिश्च भयानकैः ॥ ३८ ॥

(३८) और दूसरी हारी हुई अलग अलग हो कर बिखर गई। भयानक सिपाहियोंने उन्हें चीखें मार मार कर भगा दिया।

ग्रामाधिकारिणां मुख्या आहूता रक्षकैस्ततः ।
मूर्च्छितं योषितां वृन्दमपनेतुं स्थलान्तरम् ॥ ३९ ॥

(३९) तदनन्तर गाँवके अधिकारियोंके नेतागणोंको बुलाकर सिपाहियोंने उन मूर्च्छित स्त्रियोंके झुंडको दूसरी जगह लिवाले जानेके लिए कहा।

बलात्कारस्थलं तच्च कोलाहलसमन्वितम् ।
राज्याधिकारिणः प्रापुः केनचिद्भिषजा सह ॥ ४० ॥

(४०) राज्यके अधिकारी लोग किसी डॉक्टर अथवा वैद्यके साथ कोलाहलसे युक्त उस बलात्कारके स्थान पर पहुँचे।

उपचारेण नार्यस्ताः पुनः संज्ञां विलम्भिताः ।
देहक्लेशार्दिताश्चापि न जहुर्ध्वजरक्षणम् ॥ ४१ ॥

(४१) चिकित्सा द्वारा वे स्त्रियां चेतनत्वको प्राप्त हुई। शारीरिक कष्टसे दुःखी हुई भी उन्होंने ध्वजाकी रक्षा नहीं छोडी।

दातुकामाञ्जलं नार्यः प्राहुस्तानधिकारिणः ।
तृषयापि वरं मृत्युर्न तु पानमरेः करात् ॥ ४२ ॥

(४२) पानी पीलानेवालोंको उन स्त्रियोंने कहा कि प्यासले मर जाना अच्छा है न कि शत्रुके हाथसे पानी पीना।

प्रत्युत्तरमिदं दत्त्वा दासेभ्यो नृपतेश्च ताः ।
वीराङ्गनाः स्वगेहानि वोर्सदीयाः पुनर्ययुः ॥ ४३ ॥

(४३) राजाके नौकरोंको यह उत्तर देकर वे वोर्सदकी वीर रमणियाँ अपने घरोंको चली गईं।

अचिरेणाहमाज्ञप्ता राष्ट्रियैर्बान्धवैस्ततः ।
प्रेक्षितुं वोर्सदीयानां क्षतस्त्रीणां दशां स्वयम् ॥ ४४ ॥

(४४) शीघ्रही अपने देशीय बन्धुओंने मुझे उन बोर्सद निवासिनी जख्मी स्त्रियोंको स्वयं जाकर देखनेको कहा।

प्रस्थिताहमतः शीघ्रमङ्गनात्रयसङ्गता ।
उषःकालेऽपरेद्युश्च प्रापं भाद्रणपल्लिकाम् ॥ ४५ ॥

(४५) इसलिए शीघ्रही मैं तीन स्त्रियोंको साथ लेकर दूसरे दिन प्रातःकालमें भाद्रण नामके गाँवमें पहुँची।

अपश्यं योषितो नैकाः क्लेशार्ता भाद्रणे तथा ।
निर्भिन्नमस्तकाः काश्चिद्भिन्नाङ्गव्यथिताः पराः ॥ ४६ ॥

(४६) और भाद्रण नामके गाँवमें मैंने बहुत स्त्रियोंको क्लेशसे दुःखी देखा। कईयोंके माथे टूटे हुए थे और कई अङ्गोंके टूट जानेके कारण दुःखी थीं।

पर्यटिषं प्रतिग्रामं सह पत्न्या महात्मनः ।
पांसुदूषितमार्गेण गाढदुर्भिक्षशंसिना ॥ ४७ ॥

(४७) भयंकर दुर्भिक्षकी सूचना देनेवाले मिट्टीसे भरे रास्तेसे मैं महात्माजीकी पत्नीके साथ प्रत्येक गाँवमें फिरती रही।

प्रेक्षितं वोर्सदस्याथ चतुःशालं मया पथि ।
यत्र स्वधर्मतः प्रापुरचिरात्कीर्तिमङ्गनाः ॥ ४८ ॥

(४८) तब मैंने बोर्सदके उस बाजारको देखा जहाँ स्त्रियोंने अपने धर्मके बलसे शीघ्रही यशको प्राप्त किया था।

विसृष्टेषु निवासेषु ग्रामीणैस्त्यक्तकर्मभिः।
न कोऽपि ददृशे तस्मिन् ग्रामे रक्षिजनादृते ॥ ४९ ॥

(४९) गाँवके निवासियोंने घरों और काम-धन्धोंको छोड़ देनेके कारण उस गाँवमें सिपाहियोंके शिवाय कोई नहीं दिखाई देता था।

नातिदूरे स्थलादस्माद् ग्राममन्यं वयं गताः।
निवेशं चक्रिरे यत्र त्यक्तगेहाः कुटुम्बिनः ॥ ५० ॥

(५०) उस स्थानके निकटही हम एक दूसरे गाँवमें गई जहाँ घरबार छोड़े परिवारके साथ गृहस्थी तम्बू लगाए निवास करते थे।

सविस्तरं न आख्याता कथा शिबिरवासिभिः।
अत्याचारस्य गर्ह्यस्य यथावृत्तं हि बोर्सदे ॥ ५१ ॥

(५१) हमें शिबिरनिवसियोंने बोर्सदके घृणित अत्याचारकी कहानी जैसी की तैसी विस्तारपूर्वक सुना दी।

अल्पमात्रक्षता नार्यो वर्त्मनि प्रेक्षिता मया।
प्रत्यायान्त्यः सरित्तीराज्जलपूर्णघटान्विताः ॥ ५२ ॥

(५२) जलसे भर घड़ोंको उठाए हुए थोडे घावोंवाली स्त्रियोंको मैंने नदी तटसे लौटते देखा।

वयं ततोऽभ्यगच्छाम ग्राममन्यं बृहत्तरम्।
यत्र नैका वसन्ति स्म योषितः क्षतविक्षताः ॥ ५३ ॥

(५३) वहाँसे हम एक दूसरे बडे गाँवको पहुँची जहाँ घावोंसे आहत बहुतसी स्त्रियाँ थीं।

अहो मया महद् घोरं ग्रामेऽस्मिन्नवलोकितम्।
यदपश्यमहं नारीर्मर्माङ्गेष्वपि हिंसिताः ॥ ५४ ॥

(५४) अहो! उस गाँवमें हमने एक महा भयंकर बात यह देखी कि यहाँ स्त्रियां मर्माङ्गोंमें भी आहत हुई थीं।

उरसि प्रहृताः काश्चित्पराव्रुत्तकराः पराः।
इतराश्च क्षतोपस्था हन्त साक्षान्मयेक्षिताः ॥ ५५ ॥

(५५) हाय! कहीं स्त्रियोंको छातियोंमें मारा गया था। कईयोंके हाथ उल्टा दिए गए थे। कहीं योनिस्थानमें जख्मी थीं। ऐसा मुझे साक्षात् देखनेमें आया।

निश्चिताभिः सुयोषिद्भिः पीडिताभिरपि स्वयम्।
स्वागतं कृतमस्माकमादरेण तितिक्षुभिः ॥५६॥

(५६) उन सहनशील सुदृढ निश्चय बालियोंने स्वयं पीडित होने पर भी हमारा आदरके साथ स्वागत किया।

देशभक्तिं विलोक्यासामद्भुतां च सहिष्णुताम्।
योषितामृजुवृत्तीनामभूमाकुलविस्मिताः ॥५७॥

(५७) इन सरल स्वभावशाली स्त्रियोंकी अद्भुत सहिष्णुता तथा देशभक्ति देखकर मैं विस्मित और व्याकुल हो गई।

प्रस्थानाय नियुक्ताश्चेदपि भूयो गमिष्यथ।
इति पृष्टा मया नार्यः सोत्साहं मामवादिषुः ॥५८॥

(५८) मैंने उन स्त्रियोंसे पूछा कि 'यदि आपको प्रस्थानके लिए फिर नियुक्त किया जाय तो क्या आप जाएंगी?' इस पर उत्साहपूर्वक वे बोलीं—

प्रस्थानं यदि कार्यं नः श्वोऽपि सज्जा वयं स्थिताः।
सकृदेव हि नश्यन्ति न पुनर्द्विः शरीरिणः ॥५९॥

(५९) हमें यदि प्रस्थान करना हो तो हम कलही तय्यार हो जाएंगी। शरीरधारी एकही बार मरते हैं न कि दो बार।

जातस्य चेद् ध्रुवो मृत्युर्देशकार्ये वरं मृतिः।
जीवनं न तु दासस्य देशद्रोहविधायिनः ॥ ६० ॥

(६०) यदि उत्पन्न हुए शरीरकी मृत्यु निश्चितही है तो मरना देशके कार्यके लिए श्रेयस्कर है। देशके साथ द्रोह करनेवाले दासका जीना श्रेष्ठ नहीं है।

निशम्य वचनं तासामद्भुतं विस्मिताऽभवम् ।
अत्यशेरत यस्मात्ता धैर्येण पुरुषानपि ॥ ६१ ॥

(६१) मैं उनके अद्भुत वचन सुनकर विस्मित हो गई थी। क्योंकि वे अपने धैर्यसे पुरुषोंको भी मात कर रही थी।

उरोभागक्षतामेकामपृच्छमहमङ्गनाम् ।
ध्वजः किं न त्वया त्यक्तो रक्षितव्येऽपि चात्मनि ॥ ६२ ॥

(६२) हृदयस्थलमें आहत एक स्त्रीको मैंने पूछा कि 'अपनी रक्षा अवश्य करनी चाहिए यह समझती हुई भी तुमने झंडेका परित्याग क्यों नहीं किया था?'

सा च प्राह पताकेयं नासा ग्रामस्य कीर्तिता ।
कथं भद्रे त्यजेयं तां स्वयं ग्रामनिवासिनी ॥ ६३ ॥

(६३) उसने कहा 'हे भद्र स्त्री! यह झंडा गाँवकी नाक मानी जाती है। मैं स्वयं गाँवकी रहनेवाली होकर इसे कैसे छोड़ सकती हूँ?'

देशभक्तिरपूर्वेयं स्वार्थत्यागोऽद्भुतस्तथा ।
ग्राम्याणां खलु पूजार्हा न तज्ज्ञानं न तद्धनम् ॥ ६४ ॥

(६४) गाँवके लोगोंकी अपूर्व देशभक्ति और अद्भुत स्वार्थ-त्याग ही पूजाके योग्य है न कि उनका धन और ज्ञान।

स्वराज्यनिष्ठता तासां महोत्साहश्च योषिताम् ।
ह्रेपयेत्सुबहून् पौरान् कातरान् स्वार्थतत्परान् ॥ ६५ ॥

(६५) उन स्त्रियोंकी स्वराज्यमें श्रद्धा तथा महान् उत्साह बहुतसे स्वार्थपर एवं डरपोक नगर निवासियोंको लज्जित कर सकते हैं।

ग्रामाद् ग्राममगच्छाम कृत्स्नेऽपि दिवसे वयम् ।
शृण्वत्यस्तां कथामेकां पश्यन्त्यश्चेतराः क्षताः ॥ ६६ ॥

(६६) एक ही कथाको सुनती हुई और दूसरी आहत स्त्रियोंको देखती हुई हम दिनभर एक गाँवमें फिरती रहीं।

अथ चास्तमिते भानौ न्यवर्तामहि माद्रणम् ।
अनुकम्पाकुलात्मानः शोचनीयविलोकनात् ॥ ६७ ॥

(६७) शोचनीय दृश्योंके देखनेके कारण करुणासे व्याकुल हम सूर्यके अस्त होने पर फिर माद्रण गाँवमें पहुँची ।

कृतो मया महान् यत्नः प्राप्तया नगरीं पुनः ।
लोकान् ज्ञापयितुं वृत्तं दुःखदं स्वयमीक्षितम् ॥ ६८ ॥

(६८) नगरमें पहुँचकर अपने देखे हुए वृत्तान्तको लोगोंसे बतानेके लिए मैंने बहुत यत्न किया ।

अतिवृत्तमिदं सम्यग् विचार्यमिति याचितः ।
अनादृत्य प्रजाक्रन्दमुदासीनः स्थितोऽर्विणः ॥ ६९ ॥

(६९) 'अर्विन' (वायसराय) को प्रार्थना की गई कि इस वृत्तान्तको भली प्रकारसे सोचना चाहिए । पर उसने इस ओर ध्यान न दिया तथा उदासीन रहा ।

बलात्कारोऽपि सोढव्यः पृथिव्यामश्रुतोऽपि सन् ।
दासत्वग्रस्तदेशस्य क्षमाया नापरा गतिः ॥ ७० ॥

(७०) इस पृथिवी पर पहले कभी सुननेमें न आए हुए बलात्कारको भी सहारना चाहिए । दासत्वसे ग्रस्त देशके लिए क्षमाके सिवाय और कोई चारा नहीं है ।

अष्टादशोऽध्यायः

सारं सत्यव्रतस्येदं तितिक्षा नाम निश्चला ।
स्वातन्त्र्यमनयैव स्यादिति श्रद्धा महात्मनः ॥ १ ॥

(१) महात्माका यह विश्वास है कि दृढतापूर्वक सहारनेकी शक्ति ही सत्यव्रतका तत्त्व है । स्वतंत्रता इसीसे मिल सकती है ।

अशक्यमपि सम्भाव्यमवाप्तुं दृढनिश्चयैः।
चरित्रैर्नरवीराणां दृढीकृतमिदं पुरा ॥ २ ॥

(२) पुरातन कालमें नर-वीरोंके चरित्रोंसे यह बात पक्की हो चुकी है कि कठिन काम भी दृढनिश्चयवालों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है।

दिवसैरथ गच्छद्भिर्विक्षोभे वृद्धिमागते।
मुच्यन्तां बन्दिनो मुख्या इत्यासीद्राजशासनम् ॥ ३ ॥

(३) कई दिनोंके बीतने पर जब हलचल वृद्धिको पहुँचा तो राजाने बन्दी किए हुए नेताओंको कैदसे मुक्त कर देनेके लिए आज्ञा दी।

निर्दिष्टेऽथ दिने गान्धिर्विजितात्मा व्यमुच्यत।
बन्धनाद्बान्धवैरन्यैः सह म्लानैश्चिरं व्रत ॥ ४ ॥

(४) निर्दिष्ट अर्थात् मुकररा दिन पर संयमशील गान्धी अपने चिरकालके दुर्बल शरीरवाले साथियोंके साथ कैदसे मुक्त कर दिए गए।

निशायाश्चरमे यामे दर्शनार्थं महात्मनः।
मुम्बापुर्यां जनैर्मार्गः सङ्कुलोऽभूत्सहस्रशः ॥ ५ ॥

(५) रातके अन्तिम प्रहरमें महात्माके दर्शनके लिए आए हुए हजारों लोगोंसे बम्बईकी सड़क भर गई।

तदागमप्रतीक्षेषु नागरेष्वर्धरात्रतः।
प्रत्युषस्येव पुण्यात्मा पुण्यपुर्याः समागमत् ॥ ६ ॥

(६) नागरिकोंके आधी रातसे उनके आनेकी प्रतीक्षा करने पर प्रातःकालमें वे पुण्यात्मा पुण्यपुरीसे आ पहुँचे।

उद्गृणत्सु सहस्रेषु जयघोषं महात्मनः।
स्मिताननः स आरूढो यन्त्रयानं कृताञ्जलिः ॥ ७ ॥

(७) हजारों मनुष्योंके जयजयकारके नारे लगाने पर गाड़ीमें बैठा हाथ हाथ जोड़े वे महात्मा हँस रहा था।

दिव्यत्वमवसम्पन्नं स्वागतं तन्महात्मनः।
लोकपूज्यस्य सत्कीर्तेर्नृपतेरपि दुर्लभम् ॥ ८ ॥

(८) लोगोंमें अथवा संसारमें माननीय पवित्र यशवाले उस महात्माको जो स्वागत प्राप्त हुआ वह राजाके लिए भी दुर्लभ है।

बहिरन्तश्च सङ्कीर्णं तस्यासीद्वासमन्दिरम्।
जनौघैर्जयघोषेण नन्दद्भिस्तं दिदृक्षुभिः ॥ ९ ॥

(९) उनके निवासस्थानका अन्दर बाहर जयघोषसे उनका अभिनंदन करनेवाले दर्शनाभिलाषी जनोंसे भर गया।

यदागच्छं महात्मानं द्रष्टुकामा तदालयम्।
मणिमन्दिरनामानं दृष्टोऽसौ पर्युपासितः ॥ १० ॥

(१०) मैं जब उनके दर्शनकी इच्छासे मणिमन्दिर नामके घर पर पहुँची तो वे लोगों द्वारा घिरे हुए बैठे थे।

वृत्तान्तवाहकैः कैश्चिन्नानाप्रश्नोत्तरेप्सुभिः।
चित्रकर्मोद्यतैश्चित्रं वर्णयद्भिर्महात्मनः ॥ ११ ॥

(११) कई सन्देश लानेवालोंसे, कई अपने प्रश्नोंके उत्तरकी इच्छावालोंसे, तस्वीर बनानेमें तत्परवालोंसे, तस्वीर वर्णन करनेवालोंसे।

विविधैर्युवकस्तोमैर्देशसेवापरायणैः।
दर्शनार्थं च संप्राप्तैर्भद्रदन्त्यैः परःशतैः ॥ १२ ॥

(१२) देशसेवापरायण नाना प्रकारके युवक झुंडोंसे तथा मेरे जैसे कई सैकडों दर्शनके लिए आए हुओंसे—

अद्भुतं तस्य माहात्म्यं शास्ति यत्किल भारतम्।
विभूतिः कापि सा दिव्या न शक्तिः खलु मानुषी ॥ १३ ॥

(१३) उसका भारत पर शासन करनेवाला महत्त्व कुछ अद्भुत ही था। वह कोई दिव्य विभूती थी, मानुषी शक्ति नहीं थी।

सात्त्विका ये गुणाः पूर्वं कृष्णेनाभिहिताः स्वयम्।
ते सर्वे निवसन्त्यस्मिन्नृवरे पुण्यकर्मणि ॥ १४ ॥

(१४) स्वयं कृष्णजीने जो पहले सात्त्विक गुण बताए थे वे सारे के सारे इस पुण्यकर्मवाले श्रेष्ठ मनुष्यमें निवास करते थे।

निक्षिप्तं विधिना तेजस्तस्मिन् गान्धौ महात्मनि ।
जन्मभूमिं तमोग्रस्तां विद्योतयितुमात्मनः ॥ १५ ॥

(१५) विधाताने अपनी अन्धकारग्रस्त जन्मभूमिको प्रकाशित करनेके लिए उस *गान्धीनामके महात्मामें* (अपना) *तेज डाल दिया था।*

न परं भारतं चर्पं विदूरा अपि भूमयः ।
भासिताः सत्यदीपेन ज्वालितेन महात्मना ॥ १६ ॥

(१६) महात्मा द्वारा जलाए गए सत्यस्वरूपी दीपकने केवल भारतही नहीं प्रत्युत सुदूर देश भी प्रकाशित हो गए थे।

लोकधर्मपरिग्लानेर्नृपधर्मस्य च क्षयात् ।
सञ्जातः सर्वतः क्षोभो लोकाश्चासन् विपद्गताः ॥ १७ ॥

(१७) *लोकधर्म अर्थात् प्रजाधर्मकी ग्लानि हो जाने पर तथा* राजाके धर्मके क्षय हो जानेके कारण सब ही जगह पर हलचल मच गई थी और लोग विपत्तिमें पड़ गए थे।

तस्मादधर्मनाशाय प्रशान्तेः स्थापनाय च ।
गान्धिरूपेण भगवानवतीर्णः किमु स्वयम् ॥ १८ ॥

(१८) इसलिए अधर्मके नाशके लिए और प्रगाढ़ शान्तिको स्थापित करनेके लिए मानो गान्धीके रूपमेंही स्वयं भगवानने अवतार लिया था।

* * * *

सत्यं विजयतां लोके
मुक्तं भवतु भारतम् ।
नन्दन्तु सुखिनः सर्वे
देशजाश्च विदेशजाः ॥ १९ ॥

इति क्षमायाः कृतिषु सत्याग्रहगीता समाप्ता ।

(१९) संसारमें सत्यकी विजय हो। भारत स्वतन्त्र हो। देशीय तथा विदेशीय सब लोग सुखी होकर प्रसन्न हो।

— समाप्त —